Registration No. V-36244/2008-09 **ISSN :- 2350-0611**

The journal has been listed in 'UGC Approved List of Journals' with Journal No. – 48441 in previous list of UGC

JIFE Impact Factor – 7.23

Research Highlights

A Multidisciplinary Quarterly International Peer Reviewed Referred Research Journal

Editor
Dr. Kamlesh Kumar Singh
Assistant Professor
Department of Sociology
Pt. D.D.U. Govt. Girls P.G. College
Sevapuri, Varanasi

Volume - XIII **No. - 1** **(Jan. – Mar. 2026)**

(Part – I)

Published by
Future Fact Society
Varanasi (U.P.) India

Research Highlights - *A Referred Journal, Published by : Quarterly*

Correspondence Address :
C 4/270, Chetganj
Varanasi, (U.P.)
Pin. - 221 010
Mobile No. :- 09336924396
Email- researchhighlights1@gmail.com

Note :-

The views expressed in the journal "Research Highlights" are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Managing Editor
Avinash Kumar Gupta

©Publisher

ISSN : 2350-0611

Printed by
Interface Computer, B 31/13-6, Malviya Kunj, Lanka, Varanasi-221005 (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. T. N. Singh,** United Nations Professor of Plant Physiology, Department of Plant Sciences, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Prof. S.K. Bhatnagar,** School for Legal Studies, BBAU, Lucknow
- **Prof. (Dr.) Munna Singh**, Head of Department, Physical Education and Sports Sciences Department, Handia P.G. College, Handia, Prayagraj, U.P.
- **Dr Achchhe Lal Yadav**, Assistant Professor, Physical Education, Pt. D. D. U. Government Degree College, Saidpur, Ghazipur
- **Dr. Pramod Rao,** Assistant Professor, Department of Hindi, VBS Purvanchal University, Jaunpur
- **Dr. Anil Pratap Giri,** Assistant Professor, Department of Sanskrit, Pondicherry Central University, Pondicherry.

EDITORIAL BOARD

- **Dr. Sanjay Singh,** Department of Plant Science, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Dr. Diwakar Pradhan,** Professor in Nepali, Head, Deptt. of Indian Languages Faculty of Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Shailendra Singh,** Professor and Head, Department of Sociology, J.S. University, Sikohabad, U.P.
- **Dr. Manish Arora,** Associate Professor, Faculty of Visual Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Surjoday Bhattacharya,** Assistant Professor, Government Degree College, Pratapgarh U P
- **Dr. Upasana Ray,** Associate Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Krishna Kant Tripathi,** Assistant Professor, Deptt. of Education, Central University of Mijoram, Mijoram
- **Dr. Urjaswita Singh,** Assistant Professor, Department of Economics, M.G. Kashi Vidyapith, Varanasi.
- **Dr. Satyapal Yadav,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Brajesh Kumar Prasad,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Dewendra Pratap Tiwari,** Assistant Professor, Department of Political Science, Shree Lakshmi Kishori Mahavidyalaya (A Constituent Unit of BRA Bihar University, Muzaffarpur), Bihar

- **Dr. Hena Hussain,** Assistant Professor, Department of Psychology, Oriental College, Patna City (A Constituent Unit of Patliputra University, Patna), Bihar
- **Dr. Santosh Kumar Singh,** Assistant Professor, P.G. Department of Psychology, J.P. University. Chapra
- **Dr. Ramkirti Singh,** Assistant Professor, Department of Psychology, Gorakhpur University, Gorakhpur
- **Dr. Girish Kumar Tiwari,** Assistant Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Vaibhav Kaithvas,** Assistant Professor, Department of Performing Art, Eklavya University, Sagar Road, Damoh, MP
- **Dr. Ranjeet Kumar Ranjan,** Assistant Professor, Department of Psychology, J.P. College, Narayanpur, Bihar
- **Dr. Paromita Chaubey,** Faculty of Education, Banaras Hindu University, Varanasi

EDITOR'S NOTE

It is a great honour to me to extend my warm greetings and welcome you all to the journal, **Research Highlights,** a refereed journal of multi disciplinary research. The journal, which is a peer-reviewed, will devote to the promotion of multi-disciplinary research and explorations to the South Asian and global community. It is our objective to provide a platform for the publication of new scholarly articles in the rapidly growing field of various disciplines. We are trying to encourage new research scholars and post graduate students by publishing their papers so that they may learn and participate in literary publishing through a professional internship. Scholarly and unpublished research articles, essays and interviews are invited from scholars, faculty researchers, writers, professors from all over the world.

Note: All outlook and perspectives articulated and revealed in our peer refereed journal are individual responsibility of the author concerned. Neither the editors nor publisher can be held responsible for them anyhow. Plagiarism will not be allowed at any level. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Hoping all of you shall enjoy our endeavors and those of our contributors.

Editor

CONTENTS

"Research Highlights"

➲	गंगा–माहात्म्य ***डॉ. आदित्य नाथ***	01-04
➲	इस्लाम से पूर्व अरब में काव्य और कवियों का महत्त्व ***डॉ. नाहीद फ़य्याज़ क़िदवई***	05-09
➲	संचारी एवं गैर संचारी रोगों के रोकथाम एवं उपचार में पोषक तत्वों की भूमिका ***रीता गुप्ता*** ***डॉ. अरुन्धती राय***	10-11
➲	डिजिटल पर्यटन और स्मार्ट पर्यटन प्रबंधनः कुशीनगर में अवसर और चुनौतियाँ ***शैलेंद्र कुमार यादव*** ***डॉ. संजय कुमार***	12-18
➲	कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक का सामाजिक दुष्प्रभाव ***डॉ. सुरेन्द्र कुमार यादव***	19-22
➲	पारिवारिक और सामाजिक यथास्थिति को दृष्टिगोचर करता कोविड–19 ***मुकेश कुमार***	23-26
➲	कृषि आधारित उद्योग और ग्रामीण विकास का भौगौलिक अध्ययन ***अजित सिंह***	27-30
➲	शास्त्रीय संगीत में बंदिशें और उसमें निहित सौन्दर्य तत्व ***डॉ. नेहा बंसल***	31-33
➲	वैश्वीकरण और भारतः भ्रष्टाचार के विशेष परिप्रेक्ष्य में ***दीपेश कुमार*** ***डॉ. (प्रो.) दिनेश प्रसाद सिन्हा***	34-38
➲	'आग और पानी' के आलोक में तत्कालीन बनारस का आलोचनात्मक परिदृश्य ***मनीष कुमार साव***	39-42
➲	'आज बाजार बंद है' : हाशिए की अस्मिता और शोषणकारी तंत्र का अध्ययन ***संजय साव***	43-47
➲	हजारी प्रसाद द्विवेदी के लेखन में भाषा चिंतन ***अश्वनी कुमार मिश्र***	48-53
➲	ग्रामीण अर्थव्यवस्था में वित्तीय सशक्तिकरण में पंचायती राज व्यवस्था की भूमिका ***पंकज कुमार सिंह***	54-57
➲	भारत में आदिवासी भाषाओं का संरक्षण : एक आलोचनात्मक मूल्यांकन ***अंशु कुमार राय***	58-63
➲	रीतिकालीन कवि बिहारी की बहुमुखी प्रतिभा और ज्ञान वैभव का विश्लेषणात्मक अध्ययन ***विष्णु***	64-68

गंगा–माहात्म्य

डॉ. आदित्य नाथ*

भारतीय संस्कृति का मूल उत्स एकत्व की भावना है। नाना भेदात्मक प्रपंच की व्याख्या भारतीय दर्शन इस प्रकार करते हैं, जो इस भावना को बलवती बनाये। भारतीय चिन्तनधारा सम्पूर्ण चराचर जगत् को ब्रह्म में अध्यस्त अथवा चेतन पुरुष की प्रकाशात्मिका भित्ति में उन्मीलित मानती है। आर्य मनीषियों ने सभ्यता के विकास की सरणियों में सामाजिक व्यवस्था, धार्मिक मान्यता एवं दार्शनिक सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप प्रदान करते हुए चतुर्दिक् परिदृश्यमान विविधता में एकता का सूत्रपात बांधा। ऋग्वेद (1/164/46) की एक ऋचा इस एकत्वभाव का उद्घोष करती है–

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्।
एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।।

आधुनिक नृतत्त्ववेत्ताओं की मान्यता है कि प्राचीन भारत में लगभग 5000 कबीले थे। इनमें सर्वाधिक शक्तिशाली, मानसिक रूप से अत्यन्त विकसित एवं ज्ञान–विज्ञान से मण्डित कबीला आर्यों का कहा जाता है। ये आर्यगण श्रेष्ठ जीवन–मूल्यों से अनुप्राणित थे। डॉ0 गयाचरण त्रिपाठी का मत है कि ये आर्य इसलिये कहलाये क्योंकि ये अन्य कबीलों की भांति किसी अपरिचित पर आक्रमण की नीति नहीं अपनाते थे, बल्कि अपरिचितों को आदर देते थे। यह सिद्धान्त काल्पनिक नहीं है, अपितु आर्य शब्द के अर्थानुसंधान के फलस्वरूप स्थिर किया जा सका है।

इन आर्यों के सम्पर्क में आने वाले कबीलों पर इनके अत्यन्त उदार व्यवहार ने स्वाभाविक रूप से प्रभाव डाला। आर्य भी अन्य कवीलाई आचार–व्यवहार एवं विश्वासों से अछूते नहीं रहे। परस्पर प्रभावित होने की यह प्रक्रिया धीमें सम्पर्क एवं यातायात के माध्यमों की कमी के कारण मन्थर गति से सहस्रों वर्षों तक चलती रही। इसी दौरान स्मृतियों की मूल संकल्पनाओं ने जन्म लिया। सम्पूर्ण विश्व को एकात्ममय मानने वाले आर्य ऋषिगणों ने 5000 विभिन्न परम्पराओं एवं धार्मिक मान्यताओं वाली जनजातियों को मात्र 4 वर्णों में विभाजित करके, वर्णाश्रम धर्म की नैतिक एवं सुविचारित व्यवस्था में बांधकर, आसेतु हिमाचल एक संस्कृति का विस्तार किया। इस सांस्कृतिक एकीकरण की प्रक्रिया में वैदिक शिक्षा का भी प्रसार हुआ। इस शिक्षा के प्रसार ने पुराणों को जन्म दिया। जहाँ वेद आर्य सभ्यता की आदर्श अभिव्यक्ति हैं, वहीं पुराण आर्यों के महान्, उदार एवं विशाल हृदयता के परिचायक हैं। पुराणों ने सम्पूर्ण भारत की सभी धार्मिक वृत्तियों को संहृत करके 5 मुख्य धार्मिक धारायें प्रचारित की– सौर, शाक्त, गाणपत्य, शैव और वैष्णव। इनमें अनादिकाल से चली आ रही आर्य तथा आर्येतर पूजा पद्धतियों का सम्यक् समायोजन किया गया है। विभिन्न आकृतियों वाले जन देवताओं, नदियों, वृक्षों एवं पर्वतों आदि को, उनमें पारमेश्वरी कला का दर्शन करते हुए, चैतन्याभिन्ना प्रकृति का मानव मात्र के प्रति कृपा प्रसाद मानकर उनके आत्मरूप चैतन्य का अनुसंधान किया गया है।

सुरसरिता पुण्यजला गंगा सभी हिन्दू धार्मिक धाराओं में समान रूप से सर्वातिशायिनी है। विष्णुपदोद्भवा तथा ब्रह्मकमण्डलु निःसृता गंगा भूतभावन शिव की चूड़ा पर चन्द्रकला के ऊपर अपनी धवलिमा

* एसोसिएट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, महामाया राजकीय महाविद्यालय, धनूपुर, हण्डिया, प्रयागराज।
Email ID-adityanathyadav3006@gmail.com

से चन्द्र को भी तिरस्कृत करती हुई विराजमान है। कवि पद्माकर ने गंगा की सर्वोच्चता का बड़ा मनोरम वर्णन किया है–

कूरम पै कोल कोल्हू पै शेष कुण्डली है
कुण्डली पै फैली शैल सुफ़न हजार की।
कहैं पद्माकर त्यौं फन पै फबी है भूमि,
भूमि पैं फबी है स्थिति रजत पहार की।
रजत पहार पर शम्भु सुरनायक हैं,
शम्भु पर ज्योति जटाजूट है अपार की।
शम्भु जटाजूट पै सुचन्द की छुटी है छटा
चन्द्र की छटान हू पै छटा गंगधार की।

आचार्य शंकर ने गंगाष्टक में भगवती गंगा के दिव्य एकात्म चैतन्यस्वरूप का वर्णन अनूठी रीति से किया है। परमेश्वर की निराकार चिल्ला परा शक्ति प्रथमतः ईश्वर में आत्मरूप में निहित थी। सृष्टि का प्रसार होने पर कर्मवद्ध देवता, असुर, मनुष्य, सभी को कर्मजन्य भोगरूप दुःख के अगाध सागर में निमग्न देखकर, करुणाभिभूत होकर, कृपापूर्वक सभी प्राणियों का उद्धार करने के लिये, दही परापारमेश्वरी शक्ति जल का रूप धारण कर धरती पर भगोरथ को बहाना बनाकर प्रकट हुई–

निराकारा सृष्टेरभवदिवमीशात्मनि पुरा।
जगद् दृष्ट्वा देवासुर–नर–मुख–भ्रान्ति–निविडम्।
निमग्नं दुःखान्धौ दुरितचरिते वीक्ष्य कृपया।
समुद्धर्त नीराकृतिमिह विधायाविरभवत्।।

(गंगाष्टक–2)

कवि पद्माकर ने गंगा के द्वारा पापभंजन किये जाने का हृदयग्राही वर्णन किया है। गंगा पापियों के पाप भस्म कर देती है। यम का नरक खाली–सा हो गया है। यमराज अपनी बेकारी से खीझ कर अपना कार्यालय ही बन्द करने लगे–

गंगा को चरित्र लखि भाख्यौ यमराज यह,
ऐ रे चित्रगुप्त मेरे हुकुम में कान दे।
कहैं पद्माकर नरक सब मूंदि कर,
मूँदि दरवाजेन को तजि यह ध्यान दे।
देखु यह देवनदी कीन्है सब देव याते,
दूतन बोलाइ विदा को बेगि पान दे।
फारि डारू फरद न राखु रोजनामा कहूँ,
खाता खति जानि दे बही की बहि जानि दे।

चले गये यमराज गुस्से में ब्रह्मा के पास। कहा कि अच्छा मजाक किया आपने मेरे साथ। मुझे कह दिया कि पापियों को दण्ड दो, उधर गंगा को भेज दिया धरती पर सभी को तारने के लिये, अब या तो उसे वापस कमण्डलु में बुलाइये नहीं तो मेरा इस्तीफा लीजिये। रत्नाकर गंगावरण में इस बात को कितनी बक्रता से कहते हैं–

पापिनी की मण्डली लुकाय देति जाने कहाँ,
धाये तिहुँ लोक पै न पावति पतीजिये।
कहँ रतनाकर बिधाता सौ पुकारि जम,
खाता खीस होत सबै याही दुख दीजिये।
पूछे उठे गाजि तापे हँसत समाज सबै,
लाजनि कहाँ लगि लहूँ की घूंट पीजिये।
कै तौ कैद कीजिये कमण्डलु में गंगा फेरि,
कै तो यह साहबी हमारी फेर लीजिये।।

गंगा प्रतिनिधि है परब्रह्म की। तत्त्वदर्शी उसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश की समष्टिरूपा कहते है। वह सरस्वती, लक्ष्मी एवं उमा की पूंजीभूत रूप है। गंगा परम रहस्यमयी एवं निराकार ब्रह्मस्वरूपा है। जल रूप में वह पामर जनों के कल्याणार्थ धरा को पवित्र कर रही है। यह आचार्य शंकर का कथन है–

विधर्विष्णुः शम्भुस्त्वमसि पुरुषत्वेन सकला।
रमोमागीर्मुख्या त्वमसि ललना जह्नुतनये।
निराकारागाधा भगवति सदा त्वं विहरसि।।
क्षितौ नीराकारा हरसि जनतापान् स्व कृपया।।

मत्स्य, स्कन्द, ब्रह्म, ब्रह्माण्ड प्रभृति सभी पुराण गंगा के देवत्व की महिमा

का बखान करते नहीं अघाते। सभी भारतीय तीर्थ जल–प्रधान हैं। भवसागर तारण में समर्थ होने के कारण उनका तीर्थ नाम सार्थक है। इन तीर्थों के जलों की पवित्रता की तुलना गंगाजल से नहीं की जा सकती– भौतिक दृष्टि से भी और आध्यात्मिक दृष्टि से भी। बृहन्नारदीय पुराण (6/11) की मान्यता है कि पृथिवी पर जितने तीर्थ हैं, उनमें स्नान करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, वह गंगाजलाभिषेक की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं है–

सर्वतीर्थाभिषेकाणि यानि पुण्यानि तानि वै।
गङ्गाबिन्द्वभिषेकस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्।।

अनेक सतत प्रवहमान नदियाँ हैं भारतवर्ष में, किन्तु जलीय गुणवक्ता एवं पवित्रता के कारण गंगा सर्वोपरि है। इसकी पवित्रता की सार्वभौम स्वीकृति हुई। देश की अन्य नदियों एवं जलाशयों का गंगाकरण हुआ। उदाहरणार्थ कावेरी नदी दक्षिण भारत की गंगा के नाम से अभिहित हुई। गोदावरी विन्ध्य पर्वत के दक्षिण की गंगा मानी गई, यह गौतमी गंगा के नाम से प्रसिद्ध है। गंगा की पवित्रता देश की सीमाओं को पार कर दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों में भी समाहृत हुई। वहाँ के कई जलाशयों में गंगा की सूक्ष्म उपस्थिति की कल्पना की गयी। आधुनिक काल में गंगा को सम्मान मारीशस देश में मिला। मारीशस में एक सरोवर को गंगा सागर कहते हैं, जिसमें मार्जन वहाँ के हिन्दू धर्मावलम्बी उसी आस्था से करते हैं जिस श्रद्धा से भारतीय गंगा में करते हैं। वस्तुतः गंगा भारत एवं भारतीयों की ही देवी नहीं है, वह अन्य देशों में भी उतनी ही सम्माननीया है। गम् धातु से निष्पन्न गंगा शब्द का अर्थ है, 'सतत प्रवहमान जलधारा'। किन्तु गंगा मात्र अजस्र जलधारा नहीं है। गंगाजल अनेकानेक रोगों की अचूक दवा भी है। यह तथ्य आधुनिक वैज्ञानिक परीक्षणों से सिद्ध भी हो गया है। इस तथ्य से प्राचीन ऋषिगण परिचित थे। तभी तो गंगा–सहस्रनाम में इसे महौषधजला कहा गया है–

प्राणदा प्राणनीया च महौषधस्वरूपिणी।
महौषधजला चैव पापरोगोत्तरामृता।।

गंगाजल की पवित्रता एवं क्रिमिमारक क्षमता के ही कारण संभवतः पुराणों ने कहा है कि चाण्डाल के परम अपवित्र पात्र में रहने पर भी गंगाजल दूषित नहीं होता–

अपि चाण्डालभाण्डस्थं गाङ्गं वारि न दुष्यति।

गंगा की इस दिव्य लोकोत्तर गुणवत्ता को मुसलमान शासक भी पहचानते थे। वे बड़े सम्मान से गंगाजल का प्रयोग करते थे। सुल्तान मुहम्मद तुगलक के. लिये गंगाजल प्रतिदिन दौलताबाद जाता था। इसके वहाँ पहुँचने में 4 दिन का समय लग जाया करता था, ऐसा इब्ने बतूता लिखता है। अबुल फजल ने आइने–अकबरी में लिखा है कि बादशाह अकबर गंगाजल को अमृत समझते थे। घर और यात्रा में वे सदा गंगाजल ही पीते थे। कुछ विश्वासपात्र लोग गंगा तट पर इसीलिये नियुक्त रहते थे ताकि वे घड़ों में गंगाजल भराकर और उस पर मुहर लगाकर बराबर भेजते रहें। जब बादशाह सलामत राजधानी आगरा या फतेहपुर सीकरी में रहते थे तब गंगाजल सोरों से आता था, जब वे पंजाब जाते थे तब हरिद्वार से। खाना पकाने के लिये वर्षाजल या यमुनाजल, जिसमें थोड़ा गंगाजल मिला लिया जाता था, काम लाया जाता था। इसी प्रकार फ्रांसीसी यात्री बर्नियर लिखता है कि बादशाह औरंगज़ेब नियमित रूप से गंगाजल का प्रयोग करता था। टैबेर्नियर के यात्रा विवरण से यह भी ज्ञात होता है कि वैवाहिक अवसरों पर लोग गंगाजल का ही प्रयोग करते थे। इसके लिये काफी खर्च करके गंगाजल मंगाया जाता था। यह प्रथा सारे भारत में थी। दूर प्रान्तों से लोग गंगाजल पीने के लिये मंगाया करते थे। ध्यातव्य है कि मरते समय प्राणी को गंगाजल पिलाना आज भी जन–जन में प्रचलित है। टैबेर्नियर लिखता है कि दूर दक्षिण में भी यह प्रथा थी। विजयनगर के विख्यात शासक कृष्णदेव राय को 1525 ई० में मरणासन्न अवस्था में गंगाजल पिलाया गया तथा वे स्वस्थ हो गये थे।

बौद्ध परम्परा भी गंगा को पवित्र मानती है। भूटान युद्ध के अन्त में तूशी–लामा ने वारेन हेस्टिंग्स के पास दूत भेज कर गंगा तट पर भूमि मांगी थी। उसने वहाँ एक मठ एवं मन्दिर बनवाया था।

गंगा के परम दिव्यत्व के कारण कहा गया है कि **"गङ्गेतव दर्शनात् मुक्तिः"** अर्थात् हे 'गंगा तेरा दर्शन ही मोक्षदायक है। किन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि मुक्ति उसी की सम्भव है अथवा पुण्यलाभ उसी को प्राप्त हो सकता है जो गंगा को हृदय से पुण्यजलवाहिनी स्वीकार करता हो, उसे प्रदूषित न करे और न होने दे। ब्रह्माण्ड पुराण ने गंगा में 14 कार्य वर्जित किये हैं– (1) शौच, (2) कुल्ला करना, (3) मल विसर्जन, (4) निर्माल्य बहाना, (5) शरीर मल कर नहाना, (6) शारीरिक मैल साबुन आदि द्वारा घोना, (7) जलक्रीड़ा करना, (8) चोरी आदि करना, (9) मैथुन करना, (10) दूसरे तीर्थ की प्रशंसा, (11) अन्य तोर्थो के प्रति प्रेम प्रदर्शन, (12) कपड़े फेंकना, (13) कपड़े धोना, और (14) तैरना।

गङ्गां पुण्यजलां प्राप्य चतुर्दश विवर्जयेत्।
शौचमाचमनं सेकं नैर्माल्यं मलवर्षणम्।
गात्रसंवाहनं क्रीड़ां प्रतिग्रहमथो रतिम्।।
अन्यतीर्थरति चैव अन्यतीर्थप्रशंसनम्।
वस्त्रत्यागं तथा घातं सन्तारं च विशेषतः।।

– गंगावाक्यावली, पृ० 311; प्रायश्चित्तस्व, पृ0 98

स्कन्द पुराण ने गंगा में तेल लगाकर एवं गन्दगी से ओत–प्रोत शरीर वालों को स्नान करने से मना किया है तथा आगे कहा है कि स्नान करते समय किसी से बात न करे, इधर–उधर न देखे और झूठ न बोले।

नाम्यङ्गितः प्रविशेत्त गङ्गायां न मलादितः।
न जल्पन्न मृषा वीक्षन्न वदन्नवृतं वचः।।

– गं. वा., पृ. 311, प्रा. त, पृ0 98

ये सारी क्रियायें प्रदूषणकारिणी हैं, वह भी अत्यन्त सामान्य प्रदूषण। फिर आधुनिक विषमय रासायनिक प्रदूषण की बात ही क्या। ऐसे प्रदूषणकारियों तथा उसे रोकने की चेष्टा न करने वालों को गंगा दर्शन मार्जन जन्य पुण्य लाभ कथमपि सम्भव नहीं। ये शास्त्रोक्त विधान के उल्लंघन के दोषी एवं अक्षम्य पाप के भागी होते हैं। गंगा स्वयं कहती है– "मैं पास होते हुए भी बहुत दूर उनके लिये जो कर्म विक्षिप्त चित्त वाले हैं। मैं दूर होते हुए भी भक्तों के हृदय में सदा निवास करती हूँ। मैं केवल भक्ति के द्वारा ही ग्राह्य हूँ, न मैं ध्यान से लभ्य हूं न दर्शन से।"

अदूरस्थापि दूरस्था कर्मविक्षिप्तचेतसाम्।
दूरस्थापि हृदिस्थाहं सदा भक्तिमतामिह।
भक्त्याहमेकया ग्राह्या न ध्यानान्न च दर्शनात्।।

गंगा सर्वतीर्थमयी है। पाषण्डयुक्त नैतिक मूल्य विहीन तीर्थयात्रा को भारतीय संस्कृति में कभी स्वीकार नहीं किया गया है। यद्यपि गंगा स्वर्गीय सुख की मूल है, किन्तु समग्र रूप से नीतिवान्, आचारवान् मनुष्य ही उस अमोघ पुण्य के भागी होते हैं। ऐसा व्यक्ति ही भारतीय एकात्म दर्शन को समझ पाता है तथा अपनी मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त करता है।

◀◀ ▶▶

इस्लाम से पूर्व अरब में काव्य और कवियों का महत्त्व

डॉ. नाहीद फ़य्याज़ क़िदवई*

सारांश

इस्लाम से पूर्व अरब में काव्य और कवियों का बड़ा महत्त्व था। जाहिली काल के कवियों और इनके कलाम को लोग बड़ा महत्त्व देते थे। लोग उनकी बात को ध्यान से सुनते और उसे बड़ी अच्छी निगाह से देखते। जब किसी अरबी क़बीले में कोई शायर पैदा हो जाता तो दूसरी क़बीले के लोग उसके पास आते और उसे मुबारकबाद देते और अच्छे पकवान पकाते और औरतें खुशी से ऊथ बजाती। अरबों का दस्तूर था कि वह केवल तीन अवसरों पर मुबारकबाद देते थे। एक तो उस समय जब किसी के यहाँ कोई लड़का पैदा होता था, कोई शायर उभरता या कोई अरबी घोड़ी बच्चा जनती।

शायर के कलाम का प्रभाव और विशेषरूप से कवि आशा के कलाम का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि केवल उसके एक शेर कह देने से आठ मासूम लड़कियों की शादियाँ तुरन्त हो गयीं। कुछ कवियों ने काव्य को व्यवसाय बना रक्खा था और उसके माध्यम से धन व सम्पत्ति व उपहार प्राप्त करते थे। अरब के लोग मस्तिष्क पर बल देकर निःसंकोच कविता कहते। वाक्यों का मतलब व अर्थ पर पुनः विचार करते और उनकी नोक पलक ठीक करके क़सीदा को अन्तिम रूप देते थे। सामान्यतया जाहिली कवियों के कलाम में उस काल के दृष्टिकोण से उच्च व्यवहारिक शिक्षा सज्जनता व पवित्र अर्थ और उच्चकोटि के उद्देश्य मिलते हैं। जाहिली काल की विशेषताओं में सबसे महत्त्वपूर्ण और मुख्य विशेषता ग़ज़ल का है। फ़ख़र व हमासा भी जाहिली काव्य के महबूब अस्नाफ़ में से है। मदिहा कसीदों का उत्कर्ष जाहिली काव्य में उस समय हुआ जबकि कुछ कवियों ने धन प्राप्त करने का माध्यम बना लिया।

जाहिली काल की कविता को दीवान अलअरब कहते हैं और अब उनकी कविता उनके जीवन का रजिस्टर है तो स्पष्ट है कि उसमें उसके समस्त पहलुओं की अक़ासी रही होगी। अरबों को शेर व शायरी का इतना शौक़ था कि उन्होंने जाहिली काल के सम्पति शेर व शायरी में से सात बेहतरीन क़सीदों को छाँट कर उन्हें सोने के पानी से कतान के कपड़े पर लिखकर ख़ानेकाबा के परदे से लटका दिया था इसी कारण से उसे मोअलक़ात कहते थे।

जाहिली काल में कवियों और इनके कालाम का बड़ा महत्त्व था। लोग इनकी बात को ध्यान से सुनते और उसे बड़ी अच्छी निगाह से देखते अरब क़बीलों के रूप में रहते थे। अपने हथियारों और लोगों की संख्या के अलावा इन्हें अपने क़बीले के मफ़ाख़िर को गिनाने अपनी विशेषताओं और भलाइयों का वर्णन करने दूसरे क़बीलों के कवियों, अगर हुजू कहें तो इनका जवाब देने के लिए और फख़र मबाहात के अवसर पर मुक़ाबला में आने के लिए इन्हें कवियों की आवश्यकता पड़ती थी। इन्हीं आवश्यकता और महत्त्व के दृष्टिकोण से जब किसी क़बीले में कोई कवि पैदा हो जाता तो सारा कबीला खुशी से बाजे बजाता, जश्न करता और शादी विवाह से बढ़कर धूम–धाम करता था।[1]

इस्लाम से पूर्व के अरबी शायरी आज भी दुनिया की बेहतरीन शायरी में गिनी जाती है।[2] जब किसी अरबी क़बीला में कोई शायर पैदा हो जाता तो दूसरे क़बीले के लोग उसके पास आते और उसे मुबारकबाद देते और अच्छे पकवान पकाते, औरतें आती और ऊथ बजाती जिस प्रकार शादी के अवसर पर करती और छोटे बड़े सब खुशियाँ मनाते। इसलिए कि ये कवि इनकी इज़्ज़त को बचाता दूसरों के मुक़ाबला में इनकी हिमायत करता, इनके कारनामों को दो आम बख़शना और उनकी प्रंशसा में क़सीदें कहकर इनकों रफ़त व बुलन्दी अता करता था। इसलिए अरबों का दस्तूर था कि वह केवल तीन अवसरों पर मुबारकबाद देते थे।

* असिस्टेन्ट प्रोफ़ेसर, अरब कल्चर विभाग, 536क/47 न्यू मक्कागंज, सामने शिया पी.जी. कॉलेज, सीतापुर रोड, लखनऊ–226020, मो0– 07985884303, ईमेल– naheedkidwai03@gmail.com

[1] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 133, मुक़्तदी असन अज़हरी

[2] मिल्लते इस्लामिया का संक्षिप्त इतिहास, भाग–1, सरवत सौलत, पृष्ठ 27

एक तो इस समय जब किसी के यहाँ कोई लड़का पैदा होता था कोई शायर उभरता या कोई अरबी घोड़ी बच्चा जनती।

जब किसी क़बीले में कोई कवि सामने आता तो इस अवसर पर जन समारोह का आयोजन किया जाता।[3] जाहिली समाज में शायर की स्थिति बिना कारण न थी। उस समाज में कवि का इतना महत्त्व और समाज में इतना प्रभाव था कि केवल एक शेर के कह देने से इज़्ज़तें बिगड़ जाती और बिगड़ी इज़्ज़तें बन जाती थी। सिर को ऊँचा करके अकड़ कर चलने वाले व्यक्ति गर्दने झुकाये नज़रें बचाये चलते और जो लोग ज़लील व ख़वार समझे जातें। वह किसी शायर के केवल एक शेर कह देने से गर्दने ऊँची करके चलते और शायर ने कोई क़सीदा या शेर कहा तो तुरन्त ज़बान ज़द ख़ास व आम होकर सारे क़बीले में फैल जाता था। इसका वर्णन इनकी बैठकों और सभाओं में होता और उसका प्रभाव सारे क़बीले पर पड़ता।

कवि के इस प्रभाव के अनुसार जब मोअलक़ात का प्रसिद्ध कवि आशा ने पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद साहब के पास आकर आप की शान में मदहिया क़सीदा पढ़ना चाहा और उसकी ख़बर अबु सुफ़ियान को हुई तो उन्होंने क़बीला कुरैश के मुख्य लोगों को जमा करके कहा कि खुदा की क़सम अगर ये हज़रत मुहम्मद के पास चला गया और आपकी पैरवी कर ली तो अपने काव्य के माध्यम से सारे अरब की आग तुम्हारे ख़िलाफ़ भड़का देगा। इसलिए उसके लिए सौ ऊँट जमा करो। इन लोगों ने ऐसा ही किया और आशा ने वह ऊँट ले लिए और अपने शहर चला गया। शायर के कलाम का प्रभाव और विशेषरूप से इस आशा के कलाम का प्रभाव का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि केवल इसके शेर कह देने से आठ मायूस लड़कियों की शादियाँ तुरन्त हो गयीं।

अरब कविता कैसे कहते थे :–

अरब में हर क़बीला की यह इच्छा होती थी कि उसमें शायर लीडर और वक्ता पैदा हो परन्तु इन तीनों में से उसे सबसे ज़्यादा महबूब शायर ही होता था।[4] अरब फ़ितरतन काव्य का शौंक रखते थे। इसलिए जाहिली काल में सामान्य रूप से कवि काव्य कहते थे। जब अच्छा वातावरण उन्हें मिलता तो बिना किसी रोक–टोक के ज़बान से शेर निकलने लगते और इस प्रकार कि न शब्दों की सुन्दरता और अर्थ में कोई कमी होती और न विषय से अलग होते न ही बयान करने में कोई त्रुटि व झोल होता। जैसे हारिस और उमरव बिन कुलसूम कि इनको कविता कहने के लिए सोचने या मस्तिष्क पर बल देने की आवश्यकता नहीं होती थी। किन्तु जिन कवियों ने काव्य को व्यवसाय बना रखा था और उसके माध्यम से धन व सम्पति व उपहार प्राप्त करते थे और अपने काव्य को बड़ी सभाओं व बड़े अवसरों पर पढ़ते थे उनका मामला दूसरा था।

ये लोग मस्तिष्क पर बल देकर निःसंकोच कविता कहते फिर इन कविता पर पुनः विचार करते। शब्दों व बयान किए हुए वाक्यों, मतलब व अर्थ पर पुनः विचार करते और इनमें काँट–छाँट करके अच्छे काव्य छाँट कर और उनकी नोक पलक ठीक करके क़सीदा को अन्तिम रूप देते। स्पष्ट है जब इस प्रकार कविता कही जायेगी तो वह कला का उच्च और अद्वितीय उदाहरण होंगे।[5] इसलिए जिन कवियों ने ये नियम धारण कर रखा था उनका कलाम जाहिली काव्य का उच्च और अद्वितीय उदाहरण समझा जाता है।

इस प्रकार के कवियों ने विशेष रूप से ज़ुहेर बिन अबी सलामा और नाबगा अल ज़ुबियानी का नाम आता है। ज़ुहेर बिन अबी सलामा तो एक क़सीदा की सालभर तक इसलाह और नज़र सानी किया करता था। इसलिए उसके क़सीदों को हवलियात (जिन पर एक साल गुज़र चुका) कहते हैं। नाबगा अल ज़ुबियानी के माफी के काव्य इस प्रकार के बेहतरीन उदाहरण समझे जाते हैं।

सामान्यता जाहिली कवियों के कलाम में इस काल के दृष्टिकोण से उच्च व्यवहारिक शिक्षा सज्जनता व पवित्र अर्थ और उच्च कोटि के उद्देश्य मिलते हैं। इनके यहाँ इनाम वह एकराम की लालच से किसी अमीर या बड़े आदमी की प्रशंसा या किसी क़बीला की ख़ैर ख़्वाही और बिना कारण, हुजू नहीं मिलता किन्तु कुछ कवि ऐसे भी गुजरे हैं जिन्होंने काव्य को धन सम्पति, इनाम व एकराम प्राप्त करने का माध्यम बना रखा था। इसलिए ये कवि इस काल के बादशाह, बड़े आदमी और अमीरों की शान में क़सीदे कहते थे और उन्हें प्रस्तुत करने के लिए यात्रा करके उनके दरबार में जाते और अपना कलाम सुनाकर इनाम व इकराम से मालामाल होकर घरों को वापस आते थे।

---

[3] अरबी साहित्य का इतिहास, डॉ0 अहमद नसीम सिद्दीकी, पृष्ठ 36

[4] तारीख़ अदब अरबी, उस्ताद हसन ज़ियात, पृष्ठ 34,

[5] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 138, मुक़्तदी हरून अज़हरी

इस श्रेणी में विशेषकर नाबग़ा अल ज़ुबियानी और हस्सान बिन साबित का नाम लिया जाता है। जो अलनोमान बिन अल मुन्ज़िर और ग़स्सानी बादशाहों की प्रशंसा में मदहिया क़सीदे कहते थे और ज़ुहेर बिन अबी सलमा का नाम भी है जो हरब बिन खनान की शान में और उमया बिन अबी अल सलब का जो अब्दुल्लाह बिन जदआन की शान और आशा क़ैस का जो ना केवल बादशाह वरन् जनता और बाज़ारी लोगों की शान में भी मदहिया क़सीदें कहता था।[6]

ज़ुहेर बिन अबी सलमानाम भी है जो हरम बिन सनान की शान में और उमय्या बिन अबी अलसलत का जो अब्दुल्ला बिन जदान की शान में मदिहा क़सीदे कहता था। मदिहा क़सीदे लिखकर ले जाता और उनसे भी इनाम वह इकराम लेने में शर्म व हिजाब न महसूस करता इसके कारण से अन्त में उस पेशा को शरीफ़ लोग गिरी हुई निगाह से देखने लगे थे और शेर व शायरी करने के मुक़ाबले में ख़िताबत की प्राथमिकता देते थे।

जाहिली काल के काव्य की इमतियाज़ी ख़ुसुसियात :–

हमने काव्य उसकी विशेषता, उसका उतार–चढ़ाव और उन्नति के संबंध में विस्तृत रूप से अध्ययन किया। अब यह देखना है कि ज़ाहिली काल में कवियों ने किन विशेषताओं और प्रमुखता पर लिखा है और इस काल की कविता और कवियों की महत्त्वपूर्ण विशेषता से किया है सुविधा हेतु, हम इस हिस्से को निम्नलिखित भागों में विभाजित करते हैं।

ज़ाहिली काल में काव्य के असनाफ़ व अग़राज :–

वैसे तो ज़ाहिली काल के कवियों ने अपने मस्तिष्क, अपनी बुद्धि व फ़िकरी उतार–चढ़ाव अपने वातावरण, अपनी सामाजिक व व्यक्तिगत आवश्यकताओं और तक़ाज़ों के अनुसार लगभग प्रत्येक सनफ़ में लिखने की कोशिश की है किन्तु इस काल के विशिष्ट दशा के कारण जिनका वर्णन हो चुका है शायद बहुत से नमूने हम तक नहीं पहुँच सके हैं। अलबत्ता जिन अग़राज़ व असनाफ़ के नमूने हम तक पहुँचे हैं।

ग़ज़ल :–

इसे नसीब और तशबीन भी कहते हैं। जाहिली काल की विशेषताओं में सबसे महत्त्वपूर्ण और मुख्य विशेषता ग़ज़ल है और इस ग़ज़ल का विषय औरत थी क्योंकि ग़ज़ल के माने हैं नौजवान लड़के और लड़कियों के आपस की बात चीत और औरतों से लुत्फ़ अन्दोज़ी और इनसे हुस्न व मोहब्बत की बातें करना। इसका कारण ये है कि अरब क़बीलों और विशेष रूप से अरब प्रायद्वीप के उत्तरी अरब के बद्वी जीवन व्यतीत करते थे। चारा व पानी की तलाश में इधर–उधर आया जाया करते थे। इस प्रकार के जीवन में विभिन्न क़बीलों और इनके व्यक्ति लड़के लड़कियों, बड़े बूढ़ों को आपस में मिलने जुलने के अवसर भी मिलते थे।[7]

जीवन वास्तविक था और क़राग़त का समय अत्यधिक व जज़्बात की अधिकता थी इसलिए हुस्न व इश्क़ के क़िस्सों के परवान चढ़ने के बहुत अवसर प्राप्त थे।

इसलिए इतिहास से पता चलता है कि इस समाज में भी दिलों की दुनिया में आबाद होती और इसका केन्द्र औरत होती जो फ़ितरी बात थी। क्योंकि औरत इस समाज में केवल दिल की दुनिया ही नहीं आबाद करती थी बल्कि वह मर्दों के दोष बदोश कारगाह जीवन साथी भी थी। जब तक ये खूबसूरत जीवन न मिल जाता जीवन अधूरा रहता। यही कारण है कि अरबी साहित्य जान ग़ज़ल शान ग़ज़ल और मरक़ज़ ग़ज़ल हमेशा से ही औरत रही है।

उमरावुल क़ैस से लेकर उमराव बिन रबिया और जमीला से लेकर क़ैस और इसके समान शायरों की दिल की दुनिया की मलका की शायरी का सर चश्मा यह औरत थी।

इसलिए इसकी ख़ातिर सब कुछ लुटा देने से शायर परहेज़ नहीं करता था। उमराउल क़ैस जिसे अलमुल्क के नाम से पुकारा जाता है।

अब रहा प्रश्न ये कि जाहिली कवियों में सबसे पहले ग़ज़ल किसने कही तो इसका उत्तर बड़ा कठिन है क्योंकि हमारे पास जाहिली काव्य का जो ख़ज़ाना है उससे बिल्कुल अनुमान नहीं होता। इसका सबसे बड़ा कारण वही है कि क्रमानुसार इतिहास के अनुसार सही वस्तु हम तक नहीं पहुँच सकी है।[8] इसलिए कुछ लोगों का विचार है कि सबसे पहले उमराउल क़ैस ने ग़ज़ल कही। कुछ लोगों का विचार है

---

[6] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 137, मुक़्तदी असन अज़हरी

[7] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 139,

[8] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 142,

कि सही मानों में ग़ज़ल कहने का सेहरा नाबग़ा अल ज़ुबियानी और अल आशा के सर है। इसमें सब एक मत हैं कि जाहिली काल में औरत से इश्क़ का इज़हार और उसकी विशेषता बयान करने में उमराउल क़ैस के मुक़ाबलों में किसी को प्राथमिकता नहीं है और न ही उससे बढ़कर कोई दूसरा गुज़रा है।

फ़खर व हमासा :–

ये सनफ़ भी जाहिली काव्य के महबूब असनाफ़ में से हैं। इस सनफ़ में कवि अपनी, अपने पूर्वजों की अच्छाईयाँ इनके नेक काम, उनकी बहादुरी और चालाकी उनकी संख्या और वंश में बड़ाई के किस्से सुनाकर दूसरे क़बीलों के मुक़ाबले में फ़ख़र करता है युद्ध के अवसरों पर इन्हीं विशेषताओं को गिनाकर उत्साह पैदा करता है।

फ़खर व हमासा अरबी की इतनी मुमताज़ और नुमाया सनफ़ है कि अबु तमाम और बहुतरी ने हमासा के नाम से जाहिली काल की फ़ख़रिया और जोशीली शायरी के संग्रह एकत्रित किये हैं जो बहुत प्रसिद्ध और अब तक प्रचलित हैं। विशेषरूप से हमासा अबु तमाम को कई जगह शिक्षा में दाखिल किया गया है।

मदाह (प्रशंसा) :–

मदाह से मुराद किसी धनवान व्यक्ति या किसी बादशाह, वज़ीर या सेनापति के व्यवहार की प्रशंसा तोसीफ़ है। ये एख़लाक़ हमीदा के नज़दीक जाहिली शायर सख़ावत व करम, मेहमानदारी बहादुरी, पाकदामिनी व पाक पांज़ी और अदल व इंसाफ और सुलह व सफ़ाई थे। इसलिए जिन लोगों में विशेषता पायी जाती थी जाहिली कवि इनकी दिल खोलकर प्रशंसा करते थे। उनकी एतिहासिक विशेषता ये है कि इनकी बदौलत हमें कुछ बादशाहों, अमीरों और रईसों के व्यवहार व आदत, जीवन शैली का अनुमान होता है और इस प्रकार उस समय की संस्कृति की एक झलक भी सामने आ जाती है जो और कहीं नहीं मिलती।[9]

मरसिया :–

मरसिया का मतलब ये है कि मरने वाले की विशेषता व व्यवहार का वर्णन करके इसके मरने पर रंज व ग़म का इज़हार किया जाये और इसके बिछड़ जाने से घर और परिवार पर जो मुसीबत पड़ी है इसका वर्णन किया जाये। जाहिली काल में जब कोई किसी के मरने पर मरसिया कहता था तो बड़े–बड़े बादशाहों की मौत, बड़े–बड़े देशों की तबाही अज़ीम–अल–शान जातियों की बर्बादी के उदाहरण देता और इनके मुक़ाबले में पहाड़ों की चोटियों पर रहने वाले तन्दुरस्त पहाड़ी बकरों और झाड़ियों में छिपे रहने वाले शेरों और चटील मैदानों में फिरने वाले ज़ेबरों, गधों, उक़ाबों और साँपों की शक्ति दुगना प्रभाव पैदा हो रहा है किन्तु उसे उपरान्त इनका कोई काव्य वनज और अरूज़ की सीमा से बाहर नहीं है।

जाहिली काल के प्रसिद्ध कवि :–

अरबों ने जाहिली काल में काव्य के अकसर असनाफ में तबअ आजमायी की है। जाहिर है कि इन असनाफ में कविता कहने वालों की संख्या भी अधिक रही होगी। इसलिए प्रसिद्ध साहित्यकार और अरबों के कलाम में से जो कुछ पहुँच सका है वह बहुत थोड़ा है। यदि तुम्हारे पास काफी संख्या में इनका कलाम आया होता तो तुम्हारे पास ज्ञान व कविता का बहुत सा खज़ाना आ गया होता किन्तु इस बयान से हम किसी विशेष परिणाम पर नहीं पहुँच सकते कि अरबों ने जिन–जिन असनाफ पर तबअ आजमायी की है वह असनाफ किया थे।

इसी प्रकार उसके बारे में भी कोई बात दावे से नहीं कही जा सकती कि इन जाहिली कसीदों में नमूनों की संख्या क्या थी। अलबत्ता कुछ लोगों का विचार है कि इनकी संख्या एक सौ से भी अधिक थी। इसी प्रकार कुछ का कहना है कि जाहिली काल के कवियों ने हजारों रज़मिया कलाम और सैकड़ों लंबे कसीदे कहे थे। उनकी दलील ये है कि अरबों ने अपनी ज़िंदगी से सम्बन्धित तमाम मामलों पर तबअ आज़मायी की थी। इसीलिए उस काल की कविता, को दीवान अलअरब कहते है और जब उनकी कविता उनके जीवन का रजिस्टर है तो स्पष्ट है कि उसमें उसके समस्त पहलुओं की अकासी रही होगी।[10] और जीवन के समस्त पहलुओं की अकासी करने के लिए सैकड़ों या हजारों क़सीदे भी नाकाफ़ी हो सकते हैं।

जाहिली कवियों में से कुछ मुख्य कवियों ने बड़े लम्बे क़सीदे कहे हैं जिनके कारण से न केवल इनको बल्कि उनके क़सीदों को भी ख्याति प्राप्त होगी। इस दृष्टिकोण से इन कवियों को सात सम्प्रदाय में विभाजित किया गया है। इनमें सबसे प्रसिद्ध कवि वह है जिन्होंने मोअलक़ात कहे हैं।

---

[9] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 144,

[10] अरबी अदब की तारीख, पृष्ठ 165,

मोअलक़ात की वास्तिविकता :–

विशेष और बड़े दर्जे के शायरों में वह शायर शामिल होते हैं जिनके क़सीदे मोअलक़ात के नाम से प्रसिद्ध हैं और मशहूर अरबी मजमुआ कलाम में शामिल हैं।[11] साहित्यकारों में इस बात में अत्यन्त मतभेद रहा है कि मोअलकात किन क़सीदों को कहते हैं कुछ कहते हैं कि ये वह लम्बे क़सीदे हैं जिन्हें अरबों ने इतना पसन्द किया कि इन्हें सोने के पानी से लिखकर ख़ाना काबा में लटका दिया था। किन्तु कुछ इस विचार का विरोध करते हैं और कहते हैं कि ये लटकाये नहीं गये थे। बल्कि हमाद राविया ने जब ये देखा कि लोगों को शेर व शायरी से दिलचस्पी कम होने लगी है तो इसने वे क़सीदे जमा

किये और लोगों को सुनाया और कहा कि वही जाहिली काल के प्रसिद्ध क़सीदे हैं। इसलिए इनका नाम प्रसिद्ध क़सीदे रखा गया किन्तु कुछ लेखक, नक्काद और राविों का इत्तिफ़ाक़ है कि ये क़सीदे ख़ाना काबा में लटकाये गये थे। इसीलिए इन्हें मोअलक़ात लटकाये हुए क़सीदे कहते हैं।

इस विचार के पक्ष में इब्ने अब्द रबा ने यक़दुल फ़रीद में और इब्ने रशीक ने किताब अल अमदता में और इब्ने ख़लादून ने अपनी किताब में विस्तार से लिखा है जिसका उद्देश्य ये है कि अरबों को शेर व शायरी का इतना शौक था कि इन्होंने जाहिली काल के सम्पति शेर व शायरी में से सात बेहतरीन क़सीदों को छाँट कर इन्हें सोने के पानी से कतान के कपड़े पर लिखकर ख़ाना काबा के परदे से लटका दिया था। इसी कारण से उनके नाम के साथ 'मज़हब' अर्थात सोने के पानी से लिखे हुए क़सीदे लग गया है। इसलिए कहते थे मज़हबतन अमीरूला क़ैस मज़हबतन ज़ुहेर ये मज़हबतन सात है और इन्हीं को मोअलक़ात भी कहते हैं।

अरब देशों पर उमय्या वंश के शासन काल में हम्माद रावी नामक एक कवि ने अपनी प्रसिद्धि के लिए अपनी इच्छानुसार सात कवियों की रचनाओं का चयन करके उन्हें एकत्रित कर दिया था।[12] इन मोअलक़ात को मज़हबात इसलिए कहते थे कि बेहतरीन क़सीदे को सोने के पानी से पहले क़बाती पर लिखा जाता फिर ख़ाना काबा पर लटकाया जाता यही अनुमान है। क्योंकि अरबों के यहाँ नियम था कि इस प्रकार के जनता के फ़ैसलों को किसी न किसी तरह से ख़ाना काबा से जोड़ते अवश्य थे। इसलिए लड़ाई झगड़े में अपने फ़ैसले, सुलह समझौता के सारे काम ख़ाना काबा में बैठकर करते ताकि प्रत्येक दल ख़ाने काबा की पवित्रता के कारण इनका पाबन्द रहे। बनी हाशिम का कुरेश ने जब मक़ाताअ किया है तो उस फ़ैसले को भी लिखकर ख़ाना काबा में लटका दिया गया था ताकि बन्द रहे। इसलिए उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि अरबों ने अपने काव्य का बेहतरीन हिस्सा ख़ाना काबा में लटका दिया हो इसमें से कुछ क़सीदे अक़ाज़ मेले के है।

मोअलक़ात की संख्या पर भी विद्वानों में विरोधाभास पाया जाता है। कुछ का विचार है कि इनकी संख्या सात है और कुछ कहते हैं कि उनकी संख्या दस है किन्तु सामूहिक फ़ैसला ये है कि वह कवि जिनके क़सीदे ख़ाना काबा में लटकाए गये थे। उनकी संख्या सात है वैसे सबसे लम्बे और प्रसिद्ध क़सीदे कहने वालों को शामिल कर लिया जाये तो ये संख्या दस हो जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. अरबी अदब की तारीख़, मुक्तदी हसन अज़हरी
2. मिल्लते इस्लामिया का संक्षिप्त इतिहास, भाग–1, सरवत सौलत
3. अरबी साहित्य का इतिहास, डॉ. अहमद नसीम सिद्दीक़ी
4. तारीख़ अदब अरबी, उस्ताद अहमद हसन ज़ियात, डॉ. तुफ़ेल अहमद मदनी
5. जज़ीरतुल अरब, मौलाना मोहम्मद राबे नदवी
6. अरबी साहित्य का इतिहास, डॉ. नरेन्द्र बहादुर श्रीवास्तव, डॉ. शाह अब्दुल सलाम

◀◀ ▶▶

[11] जजीरतुल अरब, मौलाना मोहम्मद राबे नदवी, पृष्ठ 185,

[12] अरबी साहित्य का इतिहास, डॉ. नरेन्द्र बहादुर श्रीवास्तव, डॉ. शाहे अब्दुल सलाम, पृष्ठ 21

संचारी एवं गैर संचारी रोगों के रोकथाम एवं उपचार में पोषक तत्वों की भूमिका

रीता गुप्ता*
डॉ. अरुन्धती राय**

सारांश :
स्वास्थ्य मानव जीवन का आधार है और पोषण उसकी नींव। पोषक तत्व शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता, ऊतक निर्माण, तथा कार्य–संतुलन के लिए आवश्यक हैं। संचारी एवं गैर–संचारी दोनों प्रकार के रोगों की रोकथाम तथा उपचार में पोषण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण पाई गई है। संचारी रोगों में पोषण प्रतिरक्षा प्रणाली को सशक्त करता है, जबकि गैर–संचारी रोगों में यह जीवनशैली, वजन, रक्तचाप और मधुमेह के नियंत्रण में सहायक होता है।
मुख्य शब्द : पोषण, संचारी, गैर संचारी रोग, प्रतिरक्षा, संतुलित आहार, सार्वजनिक स्वास्थ्य।

प्रस्तावना :
स्वास्थ्य और रोग का संबंध मानव जीवन की जीवनशैली, आहार, और परिवेश से गहराई से जुड़ा हुआ है। आज विश्व स्तर पर यह स्वीकार किया गया है कि अधिकांश रोगों के पीछे पोषण की स्थिति एक प्रमुख भूमिका निभाती है। भारत जैसे विकासशील देशों में जहाँ एक ओर कुपोषण और संक्रमणजनित रोगों का बोझ है, वहीं दूसरी ओर मोटापा, मधुमेह, हृदय रोग जैसे गैर–संचारी रोग तेजी से बढ़ रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में पोषक तत्वों की भूमिका न केवल रोगों की रोकथाम में बल्कि उपचार और पुनर्वास में भी अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

संचारी रोग वे होते हैं जो किसी जीवाणु, विषाणु, फफूंदी या परजीवी से फैलते हैं। इन रोगों में पोषक तत्वों का सीधा संबंध प्रतिरक्षा प्रणाली से है। जब शरीर में प्रोटीन, विटामिन और खनिजों की कमी होती है, तो संक्रमण से बचाव की क्षमता घट जाती है। उदाहरण के लिए, विटामिन A की कमी से आंखों और श्वसन मार्ग की झिल्ली कमजोर हो जाती है, जिससे संक्रमण बढ़ने का खतरा होता है। विटामिन C और जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व संक्रमण से लड़ने वाली कोशिकाओं को सक्रिय करते हैं। आयरन और प्रोटीन की कमी से शरीर में एंटीबॉडी का निर्माण कम हो जाता है, जिससे टीबी, डायरिया और निमोनिया जैसे रोग तेजी से फैलते हैं।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS–5, 2019–21) के अनुसार, भारत में 5 वर्ष से कम आयु के 35.5% बच्चे अवरुद्ध वृद्धि (stunting) से ग्रस्त हैं और लगभग 32% बच्चे कम वजन के हैं। यह दर्शाता है कि उप–पोषण अभी भी एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO, 2024) की रिपोर्ट के अनुसार, विकासशील देशों में संचारी रोगों से होने वाली 45% बाल मृत्यु का कारण पोषण की कमी है।

गैर–संचारी रोग, ये वे रोग हैं जो संक्रमण से नहीं बल्कि अस्वस्थ जीवनशैली और अनुचित आहार से उत्पन्न होते हैं। इनमें प्रमुख हैं — मधुमेह, उच्च रक्तचाप, कैंसर, मोटापा और हृदय रोग। इन रोगों की रोकथाम में संतुलित आहार और पोषक तत्वों का योगदान अत्यंत प्रभावशाली है। WHO के 2023 के आंकड़ों के अनुसार, विश्व में कुल मृत्यु का लगभग 74% गैर–संचारी रोगों से होता है। भारत में भी 2022 की राष्ट्रीय NCD निगरानी रिपोर्ट के अनुसार, हर तीन में से दो मौतें इन रोगों से होती हैं।

इन रोगों की रोकथाम के लिए प्रमुख पोषण संबंधी तत्वों में फाइबर, असंतृप्त वसा, ओमेगा–3 फैटी एसिड, कैल्शियम, विटामिन D और एंटीऑक्सीडेंट शामिल हैं। फाइबर युक्त आहार जैसे साबुत अनाज, फल और सब्जियाँ रक्त में ग्लूकोज और कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखते हैं। ओमेगा–3 फैटी एसिड हृदय स्वास्थ्य को

* शोध–छात्रा, गृह विज्ञान विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ0प्र0
** असिस्टेंट प्रोफेसर, गृह विज्ञान विभाग, पं0 दीनदयाल उपाध्याय राजकीय पी0जी0 कॉलेज, पलहीपट्टी, वाराणसी, उ0प्र0

बनाए रखने में मदद करता है। कैल्शियम और विटामिन D हड्डियों की मजबूती और ऑस्टियोपोरोसिस से बचाव में सहायक हैं।

भारत में 2023 की राष्ट्रीय पोषण रिपोर्ट (NIN) के अनुसार, वयस्क आबादी में मोटापे की दर 28% तक पहुँच चुकी है, जबकि मधुमेह के रोगियों की संख्या 10 करोड़ से अधिक हो गई है। इन आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि पोषण असंतुलन और अस्वस्थ आहार भारत में गैर–संचारी रोगों के प्रमुख कारणों में से एक बन चुके हैं।

पोषक तत्वों का उपचारात्मक उपयोग भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। संचारी रोगों के उपचार में रोगी को ऊर्जा, प्रोटीन और तरल पदार्थों की अधिक आवश्यकता होती है। टीबी के उपचार में उच्च प्रोटीनयुक्त आहार और आयरन की पर्याप्त मात्रा तेजी से स्वास्थ्य सुधार में मदद करती है। इसी प्रकार डायरिया और अन्य संक्रमणों में ग्लूकोज–सोडियम युक्त तरल पदार्थ और जिंक का पूरक सेवन लाभदायक सिद्ध हुआ है।

गैर–संचारी रोगों में भी पोषण–चिकित्सा का स्थान महत्वपूर्ण है। मधुमेह रोगियों के लिए कार्बोहाइड्रेट का नियंत्रण, उच्च फाइबर और कम वसा वाला भोजन जरूरी है। हृदय रोगियों के लिए कम नमक और कम संतृप्त वसा वाला आहार प्रभावी पाया गया है। कैंसर के रोगियों में एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर फलों और सब्जियों का सेवन शरीर की कोशिकाओं को क्षति से बचाता है।

भारत सरकार ने पोषण सुधार के लिए कई कार्यक्रम संचालित किए हैं जैसे — 'राष्ट्रीय पोषण मिशन (POSHAN Abhiyaan)', 'प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना', 'राष्ट्रीय आयरन प्लस पहल', और 'राष्ट्रीय गैर–संचारी रोग नियंत्रण कार्यक्रम'। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य पोषण स्तर सुधारना, मातृ एवं शिशु मृत्यु दर कम करना, और जीवनशैली–जन्य रोगों की रोकथाम करना है।

पोषण एवं रोग नियंत्रण का संबंध केवल शारीरिक नहीं बल्कि सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी जुड़ा है। गरीबी, अशिक्षा, असंतुलित भोजन की उपलब्धता और अस्वच्छ पर्यावरण पोषण असंतुलन को बढ़ाते हैं। इसलिए रोग नियंत्रण की रणनीति में आहार शिक्षा, सामुदायिक सहभागिता और खाद्य सुरक्षा पर विशेष बल देना आवश्यक है।

भविष्य की दृष्टि से देखें तो भारत में पोषण आधारित स्वास्थ्य नीति की दिशा में सकारात्मक कदम उठाए जा रहे हैं। WHO और ICMR की नवीन रिपोर्टें इस बात पर बल देती हैं कि स्वस्थ आहार, नियमित व्यायाम, तंबाकू और शराब से परहेज, तथा पोषक तत्वों का संतुलित सेवन ही रोगों की रोकथाम का सबसे प्रभावी साधन है।

निष्कर्ष :

यह कहा जा सकता है कि पोषक तत्व न केवल शरीर को ऊर्जा और विकास प्रदान करते हैं बल्कि वे रोगों से सुरक्षा कवच का कार्य भी करते हैं। संचारी रोगों में वे प्रतिरक्षा को सशक्त बनाकर संक्रमण के जोखिम को घटाते हैं और गैर–संचारी रोगों में शरीर की चयापचय प्रणाली को संतुलित रखकर दीर्घकालिक स्वास्थ्य सुनिश्चित करते हैं। अतः स्वस्थ भारत के निर्माण के लिए संतुलित आहार, स्वच्छता, और सक्रिय जीवनशैली को अपनाना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5), भारत सरकार, 2019–21
2. World Health Organization (WHO). Global Nutrition and Health Report, 2024.
3. National Institute of Nutrition (NIN). India Nutrition Report, 2023.
4. Indian Council of Medical Research (ICMR). Non-Communicable Disease Monitoring Survey, 2022.
5. Park, K. (2022). Preventive and Social Medicine. Banarsidas Bhanot Publishers.
6. UNICEF India. State of Child Nutrition Report, 2024.

डिजिटल पर्यटन और स्मार्ट पर्यटन प्रबंधन: कुशीनगर में अवसर और चुनौतियाँ

शैलेंद्र कुमार यादव*
डॉ. संजय कुमार**

शोध सारांश

यह शोध–पत्र कुशीनगर (उत्तर प्रदेश) में डिजिटल पर्यटन तथा स्मार्ट पर्यटन प्रबंधन की वर्तमान स्थिति, संभावनाओं और प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन मिश्रित–विधि पर आधारित है, जिसमें पर्यटकों, स्थानीय व्यवसायियों, प्रशासनिक अधिकारियों तथा समुदाय प्रतिनिधियों के सर्वेक्षण एवं साक्षात्कार के साथ–साथ द्वितीयक स्रोतों की सरकारी रिपोर्ट, नीति दस्तावेज तथा पर्यटन पोर्टलों का विषय–वस्तु विश्लेषण सम्मिलित है। कुशीनगर एक विश्व–प्रसिद्ध बौद्ध तीर्थस्थल है, जहाँ महापरिनिर्वाण मंदिर तथा रामाभार स्तूप जैसे ऐतिहासिक स्थल धार्मिक एवं सांस्कृतिक पर्यटन के प्रमुख आकर्षण हैं। कोविड–19 के पश्चात् पर्यटकों के सूचना–उपयोग, ऑनलाइन बुकिंग, डिजिटल भुगतान तथा वर्चुअल सहभागिता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जिससे पर्यटन प्रबंधन में डिजिटल अवसंरचना की आवश्यकता और अधिक प्रासंगिक हो गई है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कुशीनगर में डिजिटल पर्यटन केवल तकनीकी उन्नयन का विषय नहीं है, बल्कि यह बहु–हितधारक सहभागिता, ई–गवर्नेंस, सांस्कृतिक धरोहर की संवेदनशील व्याख्या तथा समावेशी अनुभव–डिजाइन पर आधारित एक एकीकृत कार्य–ढाँचा है। साथ ही, डिजिटल विभाजन, अवसंरचनात्मक सीमाएँ, साइबर–सुरक्षा, तथा स्थानीय क्षमता–विकास जैसी चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं। यह शोध स्मार्ट पर्यटन के माध्यम से सतत विकास, स्थानीय आर्थिक सशक्तिकरण तथा वैश्विक पर्यटन प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाने के लिए नीति–निर्माताओं हेतु व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करता है।

प्रस्तावना

पर्यटन वह गतिविधि है जिसमें कोई व्यक्ति अपनी नियमित निवास स्थली से अस्थायी रूप से किसी अन्य स्थान पर मनोरंजन, शिक्षा, धर्म, व्यापार, स्वास्थ्य, शोध या अवकाश आदि उद्देश्यों से जाता है और वहाँ कुछ समय (कम से कम 24 घंटे और अधिकतम एक वर्ष तक) व्यतीत करता है। "पर्यटन वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपने घर से बाहर किसी अन्य स्थान पर थोड़े समय के लिए भ्रमण करता है, जिसका उद्देश्य मनोरंजन, शिक्षा, सांस्कृतिक अनुभव या अन्य कोई कार्य होता है, और यह यात्रा स्थायी निवास या रोजगार से संबंधित नहीं होती।"

विश्व पर्यटन संगठन (UNWTO, 1995): "पर्यटन वह गतिविधि है जिसमें कोई व्यक्ति अपने सामान्य निवास और कार्यस्थल के बाहर अवकाश, व्यवसाय या अन्य उद्देश्यों से यात्रा करता है और एक वर्ष से अधिक समय तक नहीं ठहरता।"

हुनजाइकर और क्राफ्ट (1942): "पर्यटन उन संबंधों और घटनाओं का समष्टि है जो यात्रियों और मेहमानों की यात्रा एवं अस्थायी प्रवास से उत्पन्न होती हैं, जब तक कि यह स्थायी निवास या आय–उपार्जन का साधन न बन जाए।"

मैकइंटॉश एवं गूप्स (1990): "पर्यटन वह विज्ञान, कला और व्यवसाय है जो व्यक्ति को उसके निवास स्थान से बाहर ले जाकर उसकी आवश्यकताओं को पूरा करने और सेवा उपलब्ध कराने से संबंधित है।"

हर्मन वॉन शुलार्ड (1910): "पर्यटन वह संपूर्ण गतिविधि है जिसके अंतर्गत मनुष्य अपने निवास स्थान से बाहर जाकर दूसरी जगहों की यात्रा और वहां कुछ समय के लिए निवास करता है।"

स्पिलेन (1969): "पर्यटन एक गतिविधि है जो व्यक्तियों के घर से बाहर अस्थायी रूप से कहीं और रहने से संबंधित होती है, जिसमें उनके खर्च और सेवाओं का उपभोग शामिल है।"

* शोधार्थी (असि. प्रोफेसर), भूगोल विभाग, जनता पी.जी., कॉलेज, रानीपुर, मऊ (उ.प्र.)
** शोध निर्देशक, असि. प्रोफेसर, भूगोल विभाग, जनता पी.जी. कॉलेज, रानीपुर, मऊ (उ.प्र.)

भारतीय पर्यटन नीति (1982): "पर्यटन केवल अवकाश ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक आदान–प्रदान, शिक्षा, व्यवसाय और अंतर्राष्ट्रीय समझ बढ़ाने का भी साधन है।"

21वीं सदी में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के तीव्र विकास ने वैश्विक पर्यटन उद्योग को पूरी तरह से बदल दिया है। अब पर्यटन केवल भौतिक यात्रा तक सीमित नहीं रहा, बल्कि एक डिजिटल और तकनीकी अनुभव में बदल चुका है। इसी परिवर्तनशील परिदृश्य में डिजिटल टूरिज्म और स्मार्ट टूरिज्म जैसे आधुनिक विचार सामने आए हैं, जो पर्यटकों को न केवल सुविधाजनक सेवाएं प्रदान करते हैं, बल्कि गंतव्यों के सतत प्रबंधन में भी सहायक हैं।

डिजिटल टूरिज्म वह प्रक्रिया है, जिसमें पर्यटक अपनी यात्रा की योजना, जानकारी संग्रह, टिकट बुकिंग, होटलों की समीक्षा, स्थानिक मार्गदर्शन और अनुभव साझा करने जैसी गतिविधियाँ डिजिटल माध्यमों (जैसे वेबसाइट, मोबाइल ऐप, सोशल मीडिया, वर्चुअल टूर आदि) के द्वारा करते हैं। डिजिटल टूरिज्म का मुख्य उद्देश्य पर्यटन सेवाओं को सुलभ, त्वरित और उपयोगकर्ता–केंद्रित बनाना है।

इसके विपरीत, **स्मार्ट टूरिज्म** एक उन्नत रूप है, जो केवल डिजिटल जानकारी तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें नवीनतम तकनीकों जैसे कि इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), बिग डेटा एनालिटिक्स, क्लाउड कंप्यूटिंग, और स्मार्ट सेंसर का प्रयोग कर पर्यटक अनुभव को बेहतर बनाया जाता है। स्मार्ट टूरिज्म का उद्देश्य न केवल पर्यटक की व्यक्तिगत जरूरतों के अनुसार सेवाएं देना है, बल्कि पर्यटन स्थलों के सतत विकास, पर्यावरणीय संरक्षण, भीड़ नियंत्रण और प्रबंधन को भी समाविष्ट करना है।

डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म के इन दोनों आयामों का उद्देश्य एक समान है—यात्रा को सुरक्षित, स्मार्ट, व्यक्तिगत और सतत बनाना। कोविड–19 महामारी के बाद डिजिटल माध्यमों की मांग और महत्त्व और भी बढ़ गया है। भारत में भी केंद्र और राज्य सरकारें डिजिटल इंडिया अभियान के अंतर्गत पर्यटन को तकनीक से जोड़ने पर विशेष बल दे रही हैं।

समस्या–कथन

डिजिटल तकनीक और स्मार्ट टूरिज्म समाधानों का विकास भारत सहित कई देशों में हो रहा है, किंतु कुशीनगर जैसे ऐतिहासिक और धार्मिक महत्व वाले पर्यटन स्थलों पर इन तकनीकों का समुचित कार्यान्वयन और उपयोग आज भी सीमित है। कुशीनगर, जो बौद्ध पर्यटन सर्किट का एक प्रमुख केंद्र है, वहाँ पर्यटन का अधिकतर स्वरूप अभी भी पारंपरिक है– जिसमें डिजिटल मार्गदर्शन, स्मार्ट सूचना प्रणाली, पर्यटक ट्रैकिंग, और व्यक्तिगत अनुभव जैसे पहलू अपर्याप्त रूप से विकसित हैं।

कुशीनगर में डिजिटल पर्यटन के लिए आवश्यक तकनीकी अधोसंरचना का अभाव है।
स्थानीय समुदाय और सेवा प्रदाताओं में डिजिटल साक्षरता की कमी है।
स्मार्ट टूरिज्म के लिए कोई विशेष नीति या नियोजन लागू नहीं है।
डेटा आधारित स्मार्ट पर्यटन प्रबंधन प्रणाली विकसित नहीं की गई है।

साहित्य समीक्षा

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) तकनीक ने पर्यटन क्षेत्र में क्रांति ला दी है। AI आधारित चैटबॉट, पर्सनलाइज्ड गाइड और बुद्धिमान सिफारिश प्रणालियाँ पर्यटकों को व्यक्तिगत अनुभव प्रदान करती हैं, जिससे उनकी यात्रा योजना और स्थल चयन अधिक प्रभावी बनते हैं।

Gretzel et al- (2015) के अनुसार, AI पर्यटक सेवा की गुणवत्ता सुधारने और लागत घटाने में सहायक है।

Buhalis & Amaranggana (2015) के अध्ययन में दिखाया गया है कि इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) तकनीक से जुड़े उपकरण पर्यटन स्थलों पर स्मार्ट सेवाएं उपलब्ध कराते हैं, जैसे कि रीयल–टाइम सूचना, पर्यटक ट्रैकिंग और ऊर्जा प्रबंधन।

Li et al- (2018) ने यह दर्शाया कि बड़े पैमाने पर डेटा संग्रह और विश्लेषण से पर्यटन स्थलों की सेवा गुणवत्ता में सुधार, संसाधन प्रबंधन और भविष्य की रणनीतियों के निर्माण में मदद मिलती है।

डिजिटल मीडिया ने पर्यटकों की यात्रा निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित किया है। **Nair & Thomas (2019)** ने दिखाया कि सोशल मीडिया और ऑनलाइन समीक्षा पर्यटकों के गंतव्य चयन और योजना बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

Sharma & Yadav (2020) के अध्ययन से पता चलता है कि मोबाइल ऐप्स, ई–टिकटिंग, और डिजिटल मार्केटिंग के जरिए पर्यटन सेवाओं की पहुंच और गुणवत्ता में सुधार हुआ है।

García & Martí (2021) ने पाया कि यह तकनीक पर्यावरण संरक्षण, भीड़ प्रबंधन, और रख–रखाव के लिए प्रभावी साधन बन सकती है। डिजिटल ट्विन तकनीक पर्यटन स्थलों के भौतिक और डिजिटल प्रतिरूपों का संयोजन करके गंतव्य प्रबंधन को स्मार्ट बनाती है।

Ranjan et al- (2021) ने अध्ययन किया कि महामारी के बाद वर्चुअल टूरिज्म और डिजिटल समाधान पर्यटन क्षेत्र को पुनर्जीवित करने में सहायक साबित हुए हैं। महामारी ने पर्यटन क्षेत्र की कमजोरियों को उजागर करते हुए डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म की आवश्यकता को बढ़ावा दिया है।

भारत में पर्यावरण संरक्षण और स्मार्ट टूरिज्म के बीच संतुलन पर गंभीर शोध चल रहे हैं। Singh & Gupta (2022) ने बताया कि स्मार्ट टूरिज्म के डिजिटलीकरण के दौरान पर्यावरणीय प्रभावों का आकलन और नियंत्रण आवश्यक है।

स्थानीय पर्यटन स्थलों में स्मार्ट कियोस्क और डिजिटल सूचना प्रणालियों की अनुपस्थिति पर्यटकों के लिए सूचना की कमी का कारण है। Kushinagar Tourism Study (2022) ने इस कमी को पर्यटक संतुष्टि में बाधक बताया है।

स्थानीय प्रशासन और पर्यटन गाइडों को स्मार्ट टूरिज्म तकनीकों का प्रशिक्षण नहीं दिया जा रहा है। Kushinagar Development Report (2022) में इस कमी को प्रमुख चुनौती बताया गया है।

Govt- Report (2023) के अनुसार, डिजिटल गाइड, मोबाइल ऐप्स और स्मार्ट उपकरणों की कमी पर्यटक अनुभव को प्रभावित करती है। कुशीनगर में डिजिटल टूरिज्म अभी भी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है।

पर्यटक भीड़ प्रबंधन के लिए डिजिटल सेंसर और डेटा एनालिटिक्स का उपयोग आवश्यक है, जो भीड़ नियंत्रण और सुरक्षा में मदद करता है। District Planning Commission (2023) के अनुसार, कुशीनगर में इस क्षेत्र में सुधार की आवश्यकता है।

डिजिटल टूरिज्म के अभाव से कुशीनगर के पर्यटन क्षेत्र की आर्थिक संभावनाएं पूरी तरह विकसित नहीं हो पा रही हैं। Economic Survey- Kushinagar (2023) ने इस बात पर चिंता जताई है कि डिजिटल सुधारों के बिना पर्यटन विकास सीमित रहेगा।

अध्ययन क्षेत्र

कुशीनगर, उत्तर प्रदेश का एक ऐतिहासिक और भौगोलिक दृष्टि से महत्वपूर्ण जिला है, जो विशेष रूप से बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिए एक प्रमुख तीर्थ स्थल के रूप में जाना जाता है। यहाँ गौतम बुद्ध ने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया था और यह स्थल बौद्ध परंपरा में अत्यधिक श्रद्धेय है। यह जिला गोरखपुर के लगभग 50 किलोमीटर पूर्व में बसा हुआ है। कुशीनगर का अक्षांश लगभग 26.73° उत्तर और देशांतर लगभग 83.89° पूर्व है। इसका मतलब है कि यह स्थल भूमध्य रेखा से उत्तर की दिशा में लगभग 26.73 डिग्री और ग्रीनविच मेरिडियन से पूर्व की दिशा में लगभग 83.89 डिग्री दूर स्थित है।

कुशीनगर की सीमाएँ उत्तर प्रदेश के अन्य जिलों और बिहार राज्य से जुड़ी हैं। उत्तर में यह जिला बिहार राज्य के पश्चिम चंपारण और गोपालगंज जिलों से लगा हुआ है। इसकी दक्षिणी सीमा में देवरिया जिला स्थित है, जो इसे दक्षिणी दिशा में सीमित करता है। पश्चिम की ओर कुशीनगर जिले की सीमा गोरखपुर और महाराजगंज जिलों से मिलती है। वहीं इसके पूर्व में बिहार राज्य का क्षेत्र है। इस प्रकार कुशीनगर उत्तर प्रदेश के पूर्वी छोर पर बिहार राज्य की सीमा से सटा हुआ है, जो इसे दो राज्यों के बीच एक महत्वपूर्ण संपर्क बिंदु बनाता है। कुशीनगर जिले की जलवायु उष्णकटिबंधीय मानसूनी है जो इसे भारत के पूर्वी गंगा मैदान क्षेत्र की विशिष्ट जलवायु बनाती है।

कुशीनगर की मिट्टी मुख्यतः जलोढ़ और उपजाऊ है जो गंगा नदी के मैदानी क्षेत्र की विशेषता है। यह मिट्टी चावल, गेहूँ, गन्ना, हल्दी, और केला जैसी फसलों के लिए बहुत उपयुक्त है। जिले की कृषि मुख्य रूप से सिंचाई पर निर्भर है, जिसमें नहरों और भूमिगत जल स्रोतों का प्रयोग होता है। कृषि यहाँ की प्रमुख आजीविका है, जिसमें अधिकांश लोग संलग्न हैं। प्रमुख फसलें धान और गेहूँ हैं, जो यहाँ के दो मुख्य खाद्यान्न हैं। इसके अलावा गन्ना और केले की खेती भी व्यापक रूप से की जाती है। केले की खेती से प्राप्त रेशे से बने उत्पाद जैसे रस्सी और थैले भी यहाँ के प्रमुख कुटीर उद्योगों में गिने जाते हैं।

कुशीनगर को बौद्ध धर्म के सबसे महत्वपूर्ण तीर्थ स्थलों में से एक माना जाता है। यह वही स्थान है जहाँ भगवान गौतम बुद्ध ने अपने महापरिनिर्वाण (मृत्यु) प्राप्त की थी। इस कारण से कुशीनगर न केवल भारत में, बल्कि पूरी दुनिया में बौद्ध अनुयायियों के लिए अत्यंत पवित्र स्थल है।

सबसे प्रमुख स्थल है महापरिनिर्वाण मंदिर, जहाँ भगवान बुद्ध की शयन मुद्रा में 6.1 मीटर लंबी पत्थर की मूर्ति स्थित है। यह प्रतिमा 1876 में खुदाई के दौरान प्राप्त हुई थी और इसे बौद्ध धर्म के अनुयायियों द्वारा अत्यंत पूजनीय माना जाता है। मंदिर के आसपास कई अन्य बौद्ध संरचनाएँ और स्तूप भी मौजूद हैं, जो उस युग की समृद्ध बौद्ध वास्तुकला और इतिहास को दर्शाती हैं।

रामभार स्तूप कुशीनगर का एक और महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल है। ऐसा माना जाता है कि यहीं भगवान बुद्ध का अंतिम संस्कार किया गया था। इस स्तूप को भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित किया गया है और यह बौद्ध धर्म के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्मारक है।

अध्ययन क्षेत्र–कुशीनगर

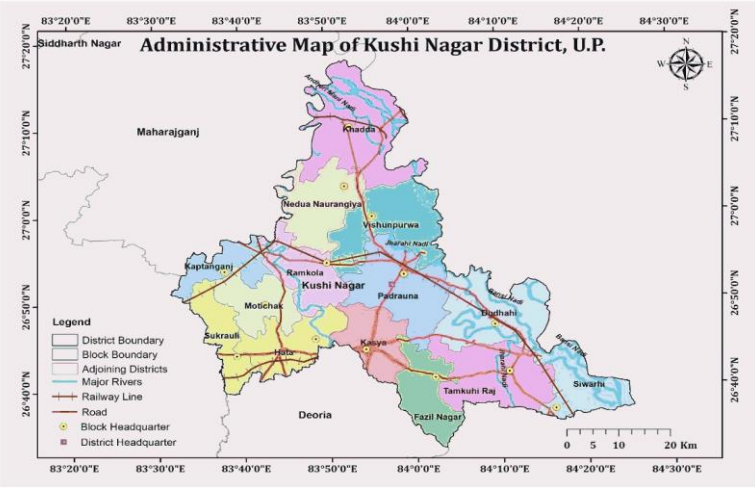

स्रोत– Central Ground Water Board Department of Water Resources, River Development and Ganga Rejuvenation, Ministry of Jal Shakti Government of India

इसके अलावा, कुशीनगर में कई अन्य बौद्ध मठ और मंदिर हैं, जैसे मठकुआर मंदिर, जहाँ धार्मिक अनुष्ठान होते हैं। अंतरराष्ट्रीय बौद्ध धर्म के प्रतीक स्वरूप यहाँ थाई, चीनी और जापानी मंदिर भी हैं, जो विश्वभर के बौद्ध समुदायों के लिए श्रद्धा स्थल हैं। इन धार्मिक स्थलों के अलावा, यहाँ एक बौद्ध संग्रहालय भी है, जहाँ भगवान बुद्ध और बौद्ध धर्म से जुड़ी पुरानी वस्तुएं और अभिलेख संग्रहित हैं। कुशीनगर का धार्मिक महत्व इसे एक अंतरराष्ट्रीय तीर्थ स्थल बनाता है, जहाँ हर वर्ष हजारों श्रद्धालु और पर्यटक आते हैं।

अनुसंधान पद्धति

यह अध्ययन कुशीनगर में डिजिटल पर्यटन और स्मार्ट टूरिज्म प्रबंधन की संभावनाओं तथा चुनौतियों की विवेचना पर केंद्रित है। यह एक वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक अध्ययन है, जिसमें शोधकर्ता ने डिजिटल प्रौद्योगिकी के उपयोग, पर्यटन सेवाओं की गुणवत्ता, और स्थानीय विकास के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न कारकों का अवलोकन किया है। चूंकि डिजिटल पर्यटन एक उभरता हुआ क्षेत्र है, इसलिए यह आवश्यक था कि अनुसंधान की प्रक्रिया वैज्ञानिक, व्यवस्थित और सटीक हो।

इस शोध में मिश्रित विधि का प्रयोग किया गया है, जिसमें गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार के डेटा संग्रह और विश्लेषण शामिल हैं। इस विधि से शोध में संतुलन बना रहता है, जिससे न केवल आँकड़ों की पुष्टि होती है, बल्कि मानव अनुभव और दृष्टिकोण की भी गहराई से समझ मिलती है।

डेटा संग्रहण के लिए दो प्रमुख स्रोतों का उपयोग किया गया, प्राथमिक और द्वितीयक। प्राथमिक डेटा हेतु संरचित प्रश्नावली तैयार की गई, जो पर्यटकों, स्थानीय व्यवसायियों, होटल प्रबंधकों, टूर गाइड्स तथा प्रशासनिक अधिकारियों को दी गई। इसके अतिरिक्त अर्ध–संरचित साक्षात्कार और फोकस ग्रुप चर्चाएँ भी आयोजित की गईं, जिनके माध्यम से डिजिटल पर्यटक अनुभव, तकनीकी पहुंच, और प्रशासनिक रणनीतियों

की गहराई से समझ विकसित की गई। द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत सरकार द्वारा प्रकाशित रिपोर्टें, शोध पत्रिकाएँ, UNWTO तथा WTTC जैसी अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं की रिपोर्टें, संबंधित वेबसाइट्स और मीडिया लेखों का अध्ययन किया गया। इन स्रोतों से वैश्विक और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में डिजिटल पर्यटन के ट्रेंड और नीतिगत ढांचे की समझ विकसित की गई।

प्राप्त डेटा का विश्लेषण SPSS और Excel जैसे सॉफ्टवेयर की सहायता से किया गया। मात्रात्मक आँकड़ों को प्रतिशत, औसत, क्रॉस–टैबुलेशन आदि सांख्यिकीय तकनीकों से विश्लेषित किया गया, जबकि गुणात्मक डेटा का विषयवस्तु विश्लेषण (Thematic Analysis) किया गया। उत्तरदाताओं के अनुभवों और दृष्टिकोणों को कोडिंग और श्रेणीकरण द्वारा समझा गया।

शोध उद्देश्य

पर्यटन आँकड़ों का विश्लेषण करके कुशीनगर में डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म के प्रभाव का मूल्यांकन करना।

डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म तकनीकों के क्रियान्वयन से कुशीनगर में पर्यटक अनुभव और पर्यटक प्रवाह में आए बदलावों का अध्ययन करना।

डिजिटल टूरिज्म के माध्यम से कुशीनगर के पर्यटन क्षेत्र में आर्थिक विकास (जैसे पर्यटन से आय, रोजगार सृजन) में हुए बदलावों का विश्लेषण करना।

वर्ष	कुल पर्यटक	विदेशी पर्यटक	भारतीय पर्यटक	विदेशी पर्यटक%	भारतीय पर्यटक %
2014	750000	150000	600000	20.00	80.00
2015	800000	160000	640000	20.00	80.00
2016	898000	180000	718000	20.04	79.96
2017	930000	200000	730000	21.51	78.4
2018	970000	210000	760000	21.65	78.35
2019	1096000	240000	856000	21.90	78.10
2020	323000	70000	253000	21.67	78.33
2021	510000	251000	259000	49.22	50.78
2022	780000	270000	510000	34.62	65.38
2023	900000	290000	610000	32.22	67.78

स्रोत– https://uptourism.gov.in, https://tourism.gov.in, https://smartcities.gov.in

कुशीनगर वह स्थान है जहाँ भगवान बुद्ध ने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया था, और यही कारण है कि यह स्थल न केवल भारत के लिए, बल्कि जापान, श्रीलंका, थाईलैंड, म्यांमार, तिब्बत, और अन्य बौद्ध देशों के लिए भी आध्यात्मिक महत्व रखता है। बदलते समय के साथ, भारत सरकार और उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग ने कुशीनगर को एक अंतरराष्ट्रीय टूरिज्म हब के रूप में विकसित करने के लिए कई प्रयास किए हैं। खासकर डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म के जरिए इस क्षेत्र में एक नई ऊर्जा का संचार हुआ है।

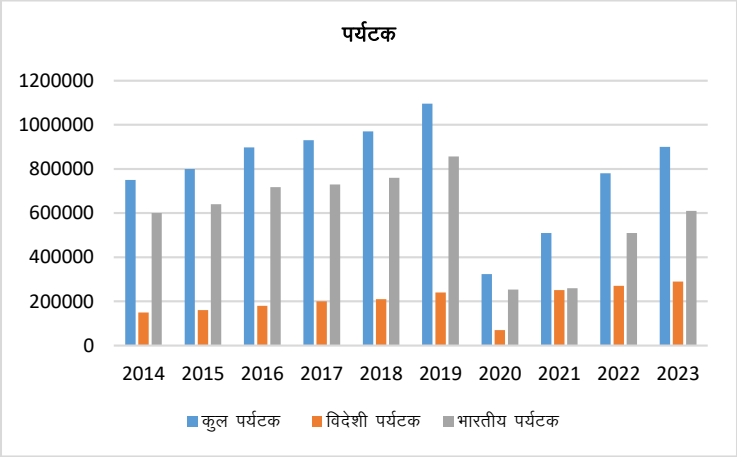

पर्यटन आँकड़ों के अनुसार, 2014 में कुशीनगर में कुल 7.5 लाख पर्यटक आए, जिनमें 20% विदेशी और 80% भारतीय पर्यटक थे। अगले कुछ वर्षों में यह संख्या क्रमशः बढ़ती गई। 2019 तक यह आँकड़ा 10. 96 लाख तक पहुँच गया, जो कि एक सकारात्मक संकेत था। विदेशी पर्यटकों की भागीदारी लगभग स्थिर रही, यानी 20% से लेकर 22% के बीच। इसका अर्थ यह है कि भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा किए जा रहे प्रचार, अवसंरचना विकास, और बौद्ध सर्किट योजनाओं का कुछ असर जरूर दिखने लगा था।

हालांकि, 2020 में कोविड–19 महामारी के चलते पूरी दुनिया में पर्यटन उद्योग पर भारी असर पड़ा। कुशीनगर में कुल पर्यटक संख्या घटकर मात्र 3.23 लाख रह गई। यह एक चिंताजनक गिरावट थी, लेकिन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में यह अपेक्षित भी थी। 2021 में कुल पर्यटक संख्या थोड़ी बढ़कर 5.1 लाख हो गई, लेकिन सबसे रोचक बात यह रही कि विदेशी पर्यटकों का प्रतिशत 49.22% तक पहुँच गया। यह एक असामान्य स्थिति थी, क्योंकि कुल संख्या कम थी और संभवतः विदेशों से लौटे बौद्ध श्रद्धालु या सीमित यात्रा करने वाले उच्च वर्ग के विदेशी इस आँकड़े में प्रमुख थे।

2022 और 2023 में स्थिति में सुधार हुआ और कुल पर्यटकों की संख्या क्रमशः 7.8 लाख और 9 लाख तक पहुँच गई। विदेशी पर्यटकों की प्रतिशतता घटकर 34.62% और फिर 32.22% पर आ गई, जबकि भारतीय पर्यटकों की भागीदारी फिर से बढ़ी। इसका तात्पर्य यह है कि जैसे–जैसे कोविड की स्थिति नियंत्रित हुई, घरेलू पर्यटन ने फिर से रफ्तार पकड़ी।

जहाँ एक ओर स्मार्ट और डिजिटल टूरिज्म ने पर्यटकों की सुविधा बढ़ाई, वहीं यह भी स्पष्ट है कि इसका प्रभाव अभी सतही स्तर तक ही सीमित है। व्यापक सुधार के लिए स्थानीय समुदायों को डिजिटल साक्षर बनाना, तकनीकी सेवाओं की गुणवत्ता सुधारना, और पर्यटन–उन्मुख स्थानीय स्टार्टअप्स को प्रोत्साहन देना आवश्यक है।

कुशीनगर में पिछले कुछ वर्षों के आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि पर्यटक आगमन की संख्या में वृद्धि हुई है। 2024 में कुल पर्यटकों की संख्या लगभग 22.4 लाख थी, जिसमें विदेशी पर्यटकों की संख्या भी 2.5 लाख के करीब रही। यह संकेत देता है कि कुशीनगर में स्थानीय के साथ–साथ अंतरराष्ट्रीय पर्यटक भी डिजिटल माध्यमों की सहायता से आसानी से पर्यटन स्थलों तक पहुंच पा रहे हैं। इस बढ़ोतरी में कुशीनगर अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है, जहाँ यात्री संख्या और विमान गतिविधियों में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है। 2024–25 के आंकड़ों के अनुसार एयरपोर्ट पर यात्रियों की संख्या में 98.5% और विमान गतिविधियों में 81.8% की वृद्धि हुई है, जो स्पष्ट करता है कि स्मार्ट और डिजिटल सिस्टम के माध्यम से परिचालन में सुधार हुआ है।

डिजिटल सेवाओं के क्रियान्वयन ने पर्यटकों के अनुभव को काफी आसान और सुखद बनाया है। ई–टिकटिंग सेवाओं ने पर्यटकों को लंबी कतारों में खड़े रहने से बचाया है, और ऑनलाइन टिकट बुकिंग से यात्रा की योजना बनाना सरल हो गया है। इसके अलावा, कई प्रमुख पर्यटक स्थलों पर फत कोड लगाए गए हैं, जिनके माध्यम से पर्यटक मोबाइल फोन के जरिए स्थल की ऐतिहासिक, धार्मिक और सांस्कृतिक जानकारी तुरंत प्राप्त कर सकते हैं। इससे पर्यटकों को गाइड की आवश्यकता कम हुई और वे अपनी सुविधा अनुसार यात्रा का आनंद ले पा रहे हैं। कुशीनगर में उपलब्ध मुफ्त Wi-Fi सेवा भी पर्यटकों को इंटरनेट आधारित सेवाओं जैसे मैप, यात्रा गाइड, और सोशल मीडिया पर अपनी यात्रा साझा करने की सुविधा प्रदान करती है, जिससे उनकी यात्रा और भी इंटरैक्टिव और जुड़ी हुई महसूस होती है।

वर्ष	यात्री संख्या	विमान गतिविधि
2021	2,53,522	2,497
2022	2,11,535	1,591
2023	2,67,345	1,701
2024	5,02,744	2,753
2025	10,00,000	4,500

स्रोत– https://uptourism.gov.in

स्मार्ट इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास ने भी पर्यटक अनुभव को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्मार्ट पार्किंग, डिजिटल सूचना बोर्ड, CCTV निगरानी, और स्मार्ट लाइटिंग ने न केवल सुरक्षा बढ़ाई है बल्कि पर्यटक स्थलों की व्यवस्था को भी अधिक सुव्यवस्थित किया है। इन तकनीकों से पर्यटकों को

आरामदायक और सुरक्षित माहौल मिलता है, जो उनकी यात्रा को यादगार बनाता है। स्थानीय प्रशासन द्वारा डिजिटल प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं, जिससे गाइड और अन्य पर्यटन सेवा प्रदाताओं को डिजिटल उपकरणों के उपयोग में दक्षता मिली है। यह कदम डिजिटल टूरिज्म के सफल क्रियान्वयन के लिए बेहद जरूरी है क्योंकि यह सीधे तौर पर सेवा गुणवत्ता में सुधार करता है।

आर्थिक दृष्टि से भी डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म ने कुशीनगर के विकास में योगदान दिया है। इस क्षेत्र में पर्यटक सुविधा केंद्र, रामभार घाट का सुंदरीकरण, प्रमुख प्रवेश द्वार और बौद्ध विहारों के विकास के लिए ₹39.69 करोड़ से अधिक का निवेश किया गया है। इसके अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश सरकार ने बौद्ध सर्किट के विकास के लिए लगभग ₹87.89 करोड़ का बजट आवंटित किया है, जिसमें कुशीनगर का भी बड़ा हिस्सा शामिल है। यह निवेश न केवल स्थानीय पर्यटन अवसंरचना को मजबूत कर रहा है बल्कि रोजगार के अवसर भी बढ़ा रहा है, जिससे स्थानीय आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है। डिजिटल सेवाओं के विस्तार से पर्यटन के क्षेत्र में नई नौकरियों का सृजन हुआ है, जैसे डिजिटल गाइड, तकनीकी सपोर्ट स्टाफ, और स्मार्ट इंफ्रास्ट्रक्चर प्रबंधन कर्मचारी।

निष्कर्ष

हालांकि, डिजिटल और स्मार्ट टूरिज्म के सफल क्रियान्वयन के बावजूद कुछ चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं। सबसे बड़ी चुनौती है तकनीकी और डिजिटल सेवाओं की पहुँच को व्यापक बनाना। कई पर्यटक, खासकर ग्रामीण क्षेत्र से आने वाले, डिजिटल उपकरणों और ऐप्स के उपयोग में कम जागरूक हैं। इसके अलावा, इंटरनेट कनेक्टिविटी की कमी और स्थानीय भाषाओं का अभाव भी एक बाधा बन सकता है। कुशीनगर जैसे धार्मिक स्थलों पर विदेशी पर्यटकों के लिए भाषा सुविधा का विस्तार भी आवश्यक है। एयरपोर्ट और अन्य पर्यटन स्थलों पर यात्री संख्या में असंगत वृद्धि और कभी–कभी गिरावट को देखकर लगता है कि परिचालन में निरंतर सुधार की जरूरत है। पर्यावरण संरक्षण के लिए डिजिटल मॉनिटरिंग सिस्टम अभी प्रारंभिक अवस्था में हैं, जिन्हें और अधिक प्रभावी बनाया जाना चाहिए।

संदर्भ सूची

भारत सरकार. (2023). भारत के 23 राज्यों में पर्यटन स्थलों की विकास योजना (पृ. 12 से 15). केंद्रीय पर्यटन विभाग।

PIB (2023). *Tourism development initiatives in Uttar Pradesh* (pp. 5–7).

शर्मा, आर., एवं सिंह, वी. (2022). डिजिटल पर्यटन में स्मार्ट तकनीकों का उपयोग; एक अध्ययन. भारतीय पर्यटन जर्नल, 14(3), 45 से 59।

मिश्रा, एस. के. (2021). कुशीनगर में पर्यटन प्रबंधन की चुनौतियाँ और अवसर. उत्तर प्रदेश पर्यटन समीक्षा, 7(2), 112से 125।

डॉ. गुप्ता, पी. (2020). स्मार्ट टूरिज्म के लिए डिजिटल उपकरणों की भूमिका. तकनीकी और पर्यटन, 9(1), 33से 42।

सिंह, आर., एवं चौधरी, जे. (2022). कुशीनगर में डिजिटल पर्यटन के प्रभाव. पर्यटन और विकास पत्रिका, 11(4), 78से 89।

यादव, एम. एल. (2023). स्मार्ट टूरिज्मः नवाचार और चुनौतियाँ. पर्यटन प्रबंधन जर्नल, 13(2), 101 से 113।

भारत सरकार. (2023). कुशीनगर में पर्यटन विकास हेतु योजनाएँ और प्रगति रिपोर्ट (पृ. 22से 30). पर्यटन मंत्रालय।

सिंह, आर. के.,एवं मिश्रा, एस.(2022).डिजिटल तकनीकें और पर्यावरण संरक्षण में योगदान. सतत पर्यटन जर्नल, 8(3),56से 67।

गुप्ता, एन., एवं वर्मा, डी. (2021). स्मार्ट सिटी अवधारणा और टूरिज्मः कुशीनगर का एक केस स्टडी. तकनीकी अनुसंधान पत्रिका, 10(2), 40से 50।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक का सामाजिक दुष्प्रभाव

डॉ. सुरेन्द्र कुमार यादव*

शोध सारांश

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के तेज़ी से बढ़ते विकास ने वैश्विक स्तर पर कई अवसर पैदा किए हैं। हालाँकि, ये तेज़ बदलाव गहरी नैतिक चिंताएँ भी पैदा करते हैं। ये चिंताएँ एआई प्रणालियों की उन संभावित क्षमताओं से उत्पन्न होती हैं जो पूर्वाग्रहों को जन्म देती हैं, जलवायु परिवर्तन में योगदान देती हैं, मानवाधिकारों को ख़तरा पहुँचाती हैं, और भी बहुत कुछ। एआई से जुड़े ऐसे जोखिम पहले से ही मौजूदा असमानताओं के साथ और भी बढ़ने लगे हैं, जिससे पहले से ही हाशिए पर पड़े समूहों को और नुकसान पहुँच रहा है। इस समस्या को दूर करने के लिए, 2021 में 193 सदस्य देशों ने सर्वसम्मति से कृत्रिम बुद्धिमत्ता की नैतिकता पर सिफारिश को अपनाया। भारत में भी विभिन्न क्षेत्रों में इसके विकास और अनुप्रयोग की दिशा में सक्रिय रूप से काम हो रहा है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) भारत में स्वास्थ्य सेवा, वित्त और शिक्षा सहित विभिन्न क्षेत्रों में तेजी से बदलाव ला रहा है। लेकिन जैसे–जैसे समाज एआई पर अधिकाधिक निर्भर होता जा रहा है, तकनीकी निर्भरता का जोखिम भी बढ़ रहा है। यह निर्भरता मानवीय कौशल और क्षमताओं को कम कर रही है। जिसका सीधा प्रभाव बेरोजगारी और आर्थिक सामनता, संबंधों में दूरी और अलगाव का बढ़ना, मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर जैसी अनेकों समस्याएं समाज में अपनी जड़ें जमाती जा रही है। प्रस्तुत आलेख कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक के बढ़ते अनुप्रयोग से होने वाले सामाजिक दुष्प्रभाव को उजागर करने का एक प्रयास है।

मुख्य शब्द – कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सामाजिक दुष्प्रभाव, तकनीक, एआई

परिचय –

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) की अवधारणा पर पहली बार 1956 में डार्टमाउथ कॉलेज में एक कार्यशाला में चर्चा की गई थी, जिसे जॉन मैक्कार्थी और मार्विन मिन्स्की द्वारा निर्देशित किया गया था। एआई ने 1960 के दशक में प्रोफेसर एच.एन. महाबाला के कार्यों के माध्यम से भारत में प्रवेश किया। यूएनडीपी द्वारा 1986 में बनाए गए ज्ञान–आधारित कंप्यूटिंग सिस्टम (केबीसीएस) ने भी भारत के लिए एआई पर ध्यान केंद्रित करने का मार्ग प्रशस्त किया। यह संयुक्त राज्य अमेरिका था जो पिछले कुछ दशकों में एआई के क्षेत्र में अग्रणी रहा था लेकिन भारत एआई में अपने ज्ञान और अनुसंधान को बढ़ाने के लिए प्रयास कर रहा है।

2018 में, भारत सरकार ने आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के लिए राष्ट्रीय रणनीति शुरू की, जो विशिष्ट क्षेत्रों में एआई विकास को बढ़ावा देने पर केंद्रित थी। इस रणनीति ने एआई के अनुप्रयोगों के उपयोग में और प्रगति की नींव रखी। हाल ही में स्वीकृत राष्ट्रीय एआई मिशन (INDIA AI) मिशन का उद्देश्य एक व्यापक पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना है जो कंप्यूटिंग पहुंच को लोकतांत्रिक बनाकर, डेटा गुणवत्ता को बढ़ाकर, स्वदेशी AI क्षमताओं को विकसित करके, शीर्ष AI प्रतिभा को आकर्षित करके, उद्योग सहयोग को सक्षम करके, स्टार्टअप जोखिम पूंजी प्रदान करके, सामाजिक रूप से प्रभावशाली AI परियोजनाओं को सुनिश्चित करके और नैतिक AI को बढ़ावा देकर AI नवाचार को बढ़ावा देता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक का अनुप्रयोग और जोखिम –

भारत में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) तेजी से विकसित हो रही है और यह अर्थव्यवस्था, समाज तथा विभिन्न क्षेत्रों को बदल रही है। 2025 तक, AI भारतीय अर्थव्यवस्था में लगभग 450–500 अरब डॉलर का योगदान देने की उम्मीद है, जो जीडीपी का 10% हिस्सा होगा। सरकारी पहल जैसे India Mission के तहत, AI को कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा और शासन जैसे क्षेत्रों में लागू किया जा रहा है। यह मिशन 2025 के अंत तक छह बड़े AI मॉडल और 18 अतिरिक्त एप्लीकेशन विकसित करने का लक्ष्य रखता है, जो भारतीय भाषाओं और

* समाजशास्त्र विभाग (गेस्ट प्रोफेसर समाजशास्त्र), शा. राजमोहिनी देवी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अम्बिकापुर सरगुजा (छ.ग.) Email id-ysurendra53@gmail.com, Mo No-8808694208

स्थानीय जरूरतों पर केंद्रित हैं। विभिन्न क्षेत्रों में एआई के बढ़ते प्रयोग और उस क्षेत्र में होने वाले दुष्प्रभाव निम्न हैं –

कृषि (Agriculture) –

भारत की 50% से अधिक आबादी कृषि पर निर्भर है, और AI यहां उत्पादकता बढ़ाने में क्रांतिकारी भूमिका निभा रहा है। AI संचालित ऐप्स जैसे Agripilot-ai किसानों को मौसम, मिट्टी की स्थिति, कीटों के हमलों और पानी की आवश्यकता के बारे में अलर्ट देते हैं, जिससे उत्पादन लागत 50% तक कम हो सकती है और पैदावार 40% बढ़ सकती है।

Microsoft और Agriculture Development Trust के सहयोग से खुतबाव गांव में AI का उपयोग पानी और कीटनाशकों के इष्टतम उपयोग के लिए किया गया, जिससे 2025 में उल्लेखनीय सुधार हुआ। IndiaAI Mission के तहत एग्रीटेक समाधान विकसित हो रहे हैं, जो जलवायु परिवर्तन और आपदा प्रबंधन पर फोकस करते हैं।

दुष्प्रभाव –

छोटे और सीमांत किसानों का बाहर होना – भारत में 86 प्रतिशत किसान 2 हेक्टेयर से कम जमीन वाले है जबकि एआई आधारित किसानी उपकरण बहुत महंगे हैं।

डेटा पर एकाधिकार और किसानों की निर्भरता – ज्यादातर एआई निजी कंपनियों के हैं, ये कंपनियां किसानों के फसल, मिट्टी, मौसम एवं कीमत का सारा डेटा अपने पास रखती हैं।

गलत भविष्यवाणी – एआई माडल से भविष्यवाणी करने में गलती हो जाती है विशेषकर भारतीय मौसम और मिट्टी की विविधता के कारण।

रोजगार में कमी – एआई के अनुप्रयोग ने किसानों में पहले से छिपी बेराजगारी को और बढ़ा दिया है, कीटनाशक का छिड़काव, फसलों की कटाई जैसे अनेकों कार्य एआई के मदद से संभव हुए हैं।

बीज और रसायनों पर कॉर्पोरेट का नियंत्रण – एआई बीज एवं रसायनों के संदर्भ में जो सलाह देता है वो अक्सर उन कंपनियों के होते हैं जो उनसे टाईअप होते हैं। ऐसे बीज और रसायन काफी महंगे होते हैं जो किसानों पर कर्ज लेने की अवस्था में पहुंचा देता है।

डेटा के गोपनीयता का दुरूपयोग – किसानों की जमीन, बैंक खाता, आधार आदि डाटा कंपनियों के पास रहता है जिसका दुरूपयोग होने की संभावना बनी रहती है। वर्तमान में कई ऐसे उदाहरण सामने आयें हैं कई किसानों के डाटा का दुरूपयोग कर साइबर अपराधियों ने किसानों को अपना शिकार बनाया है।

स्वास्थ्य सेवा (Healthcare) –

AI स्वास्थ्य पहुंच को सुलभ बना रहा है, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में। AI–पावर्ड टूल्स जैसे e–Paarvai (तमिलनाडु सरकार द्वारा) मोतियाबिंद का पता लगाने में मदद करते हैं, जहां डॉक्टरों की कमी है। Sigtuple जैसी स्टार्टअप्स AI का उपयोग पैथोलॉजी रिपोर्ट्स को तेजी से विश्लेषित करने के लिए कर रही हैं। 2025 में, India AI Safety Institute नैतिक AI फ्रेमवर्क विकसित कर रहा है, जो स्वास्थ्य डेटा की गोपनीयता सुनिश्चित करेगा। 18 AI एप्लीकेशनों में स्वास्थ्य पहुंच एक प्रमुख क्षेत्र है।

दुष्प्रभाव –

गलत निदान और चिकित्सकीय गलनियां – एआई भारतीय त्वचा, अनुवांशिक विविधता का सही से नहीं पहचान पाते। त्वचा कैंसर डिटेक्शन में गहरे रंग की त्वचा पर एआई की सटीकता 30–40 प्रतिशत तक गिर जाती है। 2023 में कुछ अस्पतालों में एआई रेडियोलाजी टूल ने टीबी को गलत तरीके से निमोनिया बता दिया।

डॉक्टरों की अतिनिर्भरता और कौशल ह्रास – डॉक्टरों की निर्भरता एआई पर बढ़ने के कारण उनकी कौशल शक्ति छीण हो रही है।

गरीब मरीजों की समस्या में वृद्धि – एआई उपयोग वाले उपचार अत्यधिक महंगे होते हैं और चिकित्सकों की निर्भरता भी एआई की अनुप्रयोग में बढ़ती जा रही है ऐसे में गरीब मरीजों को उचित उपचार प्राप्त करने में भारी समस्या बढ़ रही है।

शिक्षा (Education) :

AI शिक्षा को व्यक्तिगत और समावेशी बना रहा है। 2025–26 के बजट में 500 करोड़ के निवेश से AI सेंटर ऑफ एक्सीलेंस स्थापित किया जा रहा है, साथ ही 50,000 अतल टिंकरिंग लैब्स स्कूलों में लगेंगी। YUVA AI for ALL जैसी मुफ्त सरकारी कोर्स (Future Skills Prime पर उपलब्ध) AI बेसिक्स, नैतिक उपयोग और करियर पथ सिखाती हैं। उच्च शिक्षा में 50% छात्र AI टूल्स का उपयोग रिसर्च, लेखन और जटिल विषयों को

समझने के लिए कर रहे हैं। Microsoft के ADVANTA(I)GE India प्रोग्राम ने 2024–25 में 2.4 मिलियन लोगों को AI स्किल्स सिखाई, जिनमें 65% महिलाएं हैं।

दुष्प्रभाव –

शिक्षा और कुशलता का ह्रास – Unesco 2024 के रिपोर्ट के आधार पर 70 प्रतिशत से ज्यादा छात्र असाइनमेंट में एआई का उपयोग कर रहे हैं। जबकि क्रिटिकल थिंकिंग में 40–50 प्रतिशत की कमीं आई है।

स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी 2025 के अनुसार जो छात्र लगातार एआई टूल्स का उपयोग करते हैं, उनकी स्वतंत्र लेखन क्षमता 02 साल में 45 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

वित्त और बैंकिंग (Finance and BFSI) :

AI धोखाधड़ी पहचान और ग्राहक सेवा को मजबूत कर रहा है।

ब्लॉकचेन के साथ AI एकीकरण डेटा अखंडता और फ्रॉड डिटेक्शन के लिए उपयोग हो रहा है। 2025 में, बैंकिंग IT खर्च $15 अरब तक पहुंचेगा, जहां AI चौटबॉट्स प्रतिक्रिया समय 80% कम कर देते हैं और लागत 35% बचाते हैं। RBI AI नैतिकता के लिए फ्रेमवर्क विकसित कर रहा है।

दुष्प्रभाव –

पारदर्शिता की कमीं – जटिल न्यूरल नेटवर्क के फैसले समझना बहुत मुश्किल होता है। यदि एआई किसी को लोन देने से मना कर दे तो क्यों बनाता रेगुलेटर के लिये जरूरी है, लेकिन ज्यादातर मॉडल विश्लेषण नहीं कर पाते।

नौकरियों का बड़े पैमाने पर विस्थापन – ऋण प्रक्रिया, ग्राहक सुरक्षा एवं सुविधा, अकाउंट रिकॉन्सिलिएशन जैसे कई रूटीन कार्य अब एआई और रोबेटिक प्रोसेस ऑटोमेंशन कर रहे हैं।

सिस्टेमिक जोखिम और फ्लैक्श क्रैश – 2010 में हाई फ्रिक्वेंसी ट्रडिंग के कारण बाजार क्रेश हो चुका है। भविष्य में भी ऐसे आर्थिक जोखिम का खतरा बना रहगा। सभी बैंक एक ही एआई माडल या समान डेटा पर निर्भर होने लगे तो पूरे वित्तीय तंत्र में एक साथ जोखिम बढ़ जाता है

शासन और स्मार्ट सिटी (Governance and Smart Cities) :

AI शासन को डेटा–आधारित और कुशल बना रहा है। Digi Locker और UMANG ऐप्स AI के माध्यम से दस्तावेज डिजिटाइजेशन और सरकारी सेवाएं प्रदान करते हैं। स्मार्ट सिटी में AI ट्रैफिक प्रबंधन, अपशिष्ट प्रबंधन और ऊर्जा अनुकूलन के लिए उपयोग हो रहा है, जो 2025 तक $31 अरब का बाजार पैदा करेगा। iGOT–AI Mission Karmayogi पब्लिक सेक्टर अधिकारियों के लिए AI क्षमता निर्माण कर रहा है।

दुष्प्रभाव –

सामाजिक असमानता और वर्ग विभाजन का बढ़ना – शासन की सुविधाओं का अधिकतम लाभ अमीर वर्ग और डिजिटल साक्षर लोग ही ले पाते हैं।

निजता का हनन – एआई तकनीक का वृहद उपयोग जिसमें फेशियल रिकग्निशन का विकल्प लोगों में सामाजिक भय उत्पन्न कर रहा है।

महिलाओं और अल्पसंख्यकों पर अतिरिक्त दबाव – एआई संचालित सेफ सिटी कैमरे अक्सर महिलाओं की ड्रेस, रात में बाहर होने जैसी घटनाओं पर नजर रखते हैं। हिजाब पहनने वाली महिलाओं को फेशियल रिकग्निशन संदिग्ध घोषित कर देता है।

सामुदायिक विश्वास का खतरा – किसी व्यक्ति की जाने–अनजाने हुए अपराधिक कृत्य उसे भावी अपराधी घोषित कर देता है, जो सामुदायिक विश्वास के लिये खतरा है

अन्य सामाजिक दुष्प्रभाव :

बेरोजगारी और आर्थिक असमानता –

IMF (2024) – विश्व की लगभग 40 प्रतिशत नौकरियों पर AI का प्रभाव पड़ेगा, विकसित देशों में 60 प्रतिशत नौकरियाँ जोखिम में। World Economic Forum (2023–25) – 2027 तक 8.5 करोड़ नौकरियाँ खत्म होंगी, केवल 6.9 करोड़ नई नौकरियाँ बनेंगी नेट नुकसान। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी (Frey & Osborne, 2017, अपडेट 2024) – भारत में 69% नौकरियाँ ऑटोमेशन के उच्च जोखिम में (ड्राइवर, रिटेल, बीपीओ आदि)। McKinsey Global Institute (2024) – भारत में 2030 तक 4.5 करोड़ लोगों को नई स्किल सीखनी पड़ेगी वरना बेरोजगार हो जाएँगे।

मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव –

American Psychological Association (2023–25) – सोशल मीडिया के – एल्गोरिदम से किशोरों में डिप्रेशन 30 प्रतिशत और आत्महत्या के विचार 22 प्रतिशत बढ़े। Instagram आंतरिक शोध (2021, लीक 2024 तक) – 32 प्रतिशत किशोरियों ने कहा कि Instagram ने उनकी बॉडी इमेज को और खराब किया। Royal Society for Public Health] UK (2024) – AI &ड्रिवेन रिकमंडेशन सिस्टम स्क्रॉल टाइम को 70 प्रतिशत तक बढ़ाते हैं नींद की कमी और चिंता। Haidt – Twenge (2024) – 2012 के बाद से Gen-Z में अकेलापन और डिप्रेशन में 100–150 प्रतिशत की वृद्धि, मुख्य कारण AI आधारित सोशल मीडिया।

डीपफेक और लोकतंत्र पर खतरा –

Deepfake Detection Challenge (2024) – अब केवल 55–60 प्रतिशत डीपफेक वीडियो ही डिटेक्ट हो पाते हैं। भारत में 2024 लोकसभा चुनाव के दौरान 300+ डीपफेक वीडियो वायरल (Fact & check रिपोर्ट्स)। MIT Technology Review (2025) – 2024–25 में दुनिया भर के 50+ चुनावों में AI–जनरेटेड फेक कंटेंट का दुरुपयोग हुआ।

गोपनीयता और निगरानी –

Amnesty International (2024) – भारत में 12 राज्यों में फेशियल रिकग्निशन का पुलिस द्वारा दुरुपयोग, बिना कानूनी आधार के।

सामाजिक ध्रुवीकरण –

NYU & Stanford अध्ययन (2024) – YouTube और Facebook के AI एल्गोरिदम राजनीतिक ध्रुवीकरण को 10–15 प्रतिशत तक बढ़ाते हैं। भारत में WhatsApp + AI टूल्स से 2018–2024 तक 100+ मॉब लिंचिंग केस (AltNews रिपोर्ट)।

लैंगिक और नस्लीय पूर्वाग्रह –

Google Photos (2015–2023 तक): गहरे रंग के लोगों को "गोरिल्ला" टैग करता रहा। Amazon का रिक्रूटमेंट AI (2018) – महिलाओं के रिज्यूम अपने आप रिजेक्ट कर देता था। AI चौटबॉट्स (2023–25) – भारतीय नामों/भाषाओं पर खराब परफॉर्म करते हैं (IIT दिल्ली अध्ययन)। NITI आयोग रिपोर्ट (2024) – भारत में AI से 2035 तक GDP में $1 ट्रिलियन का फायदा होगा, लेकिन 7–8 करोड़ लोग बेरोजगार हो सकते हैं। 2024–25 में भारत में AI पोर्न/डीपफेक से 50,000+ महिलाएँ प्रभावित (Internet Freedom Foundation)। दिल्ली, हैदराबाद, लखनऊ में फेशियल रिकग्निशन से गलत गिरफ्तारियाँ (2023–25)।

निष्कर्ष –

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का बढ़ता प्रयोग समाज को अभूतपूर्व गति से बदल रहा है, लेकिन इसके अधिकांश गंभीर दुष्प्रभावों (बेरोजगारी, मानसिक स्वास्थ्य, गोपनीयता, ध्रुवीकरण) के लिए अभी तक कोई प्रभावी नीति या कानून नहीं बना है। ज्यादातर देश "रेगुलेट करने की बात" कर रहे हैं, लेकिन टेक्नोलॉजी बहुत तेजी से आगे बढ़ रही है। यह अनुमान लगाना कठिन है कि भविष्य में एआई हमारे जीवन को कैसे प्रभावित करेगा, हालाँकि अब तक इसका प्रभाव काफ़ी महत्वपूर्ण रहा है। हालाँकि एआई में समाज की मदद करने की अपार क्षमता है, जैसे स्वास्थ्य सेवा के परिणामों में सुधार, लेकिन यह बढ़ती असमानता सहित सामाजिक और नैतिक नुकसान भी पैदा कर सकता है। एआई से समाज को कितना लाभ होगा, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि इसका विनियमन किस प्रकार किया जाता है, नुकसान से बचाव के लिए सुरक्षा के स्तरित उपाय जागरूकता उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

संदर्भः–

https://www.technologyreview.com/2025/01/03/1109178/10-breakthrough-technologies-2025/
https://www.amnesty.org/en/documents/pol10/7200/2024/en/
https://post.parliament.uk/how-is-artificial-intelligence-affecting-society/

◀◀ ▶▶

पारिवारिक और सामाजिक यथास्थिति को दृष्टिगोचर करता कोविड–19

मुकेश कुमार*

सार :
कोविड–19 महामारी ने वैश्विक स्तर पर केवल स्वास्थ्य संकट ही नहीं उत्पन्न किया, बल्कि सामाजिक और पारिवारिक संरचनाओं की वास्तविक स्थिति को भी उजागर किया। इस महामारी ने समाज के भीतर विद्यमान असमानताओं, लैंगिक विभाजन, आर्थिक विषमता तथा पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं को स्पष्ट रूप से सामने लाया। प्रस्तुत शोध–लेख का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि कोविड–19 ने किस प्रकार पारिवारिक एवं सामाजिक यथास्थिति को दृष्टिगोचर किया। अध्ययन में गुणात्मक विश्लेषण पद्धति का उपयोग करते हुए विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आयामों का परीक्षण किया गया है। निष्कर्षतः यह स्पष्ट होता है कि कोविड–19 ने न केवल समाज की कमजोरियों को उजागर किया, बल्कि परिवर्तन की संभावनाओं को भी जन्म दिया।

विशिष्ट शब्दः कोविड–19, सामाजिक यथास्थिति, पारिवारिक संरचना, असमानता, सामाजिक परिवर्तन, इत्यादि।

21वीं सदी में मानव सभ्यता ने अनेक तकनीकी और वैज्ञानिक उपलब्धियाँ हासिल की हैं, किंतु COVID–19 ने यह सिद्ध कर दिया कि आधुनिक समाज अभी भी संकटों के प्रति संवेदनशील है। यह महामारी केवल एक जैविक आपदा नहीं थी, बल्कि यह सामाजिक संरचनाओं की परीक्षा भी थी।

कोविड–19 के दौरान लागू लॉकडाउन, सामाजिक दूरी, और आर्थिक गतिविधियों के ठहराव ने परिवार और समाज दोनों के वास्तविक स्वरूप को उजागर किया। परिवार, जो सामाजिक संस्था का आधार माना जाता है, महामारी के दौरान एक ओर सुरक्षा का केंद्र बना, तो दूसरी ओर तनाव और संघर्ष का भी कारण बना।

21वीं सदी जहाँ कि तकनीक का नया स्वरूप हमें देखने को मिल रहा है। विकास की प्रक्रिया को तकनीक और डिजिटल अविष्कार ने संपूर्ण विश्व के एक गाँव के रूप में स्थापित कर दिया है। शारीरिक दूरी और भौगोलिक दूरी को मोबाईल एवं इससे जुड़ी अनेको सुविधाओं ने इस दूरी के एहसास को काफी कम ही कर दिया है। हर दूसरे जिन नए अविष्कारों ने व्यक्ति और परिवार जैसी मूलभूत सामाजिक इकाई को भी दर–किनार करना शुरू कर दिया है। काफी हद तक यह बहुत अच्छी पहल है। नहीं कहा जा सकता। मानव एवं मानव अविष्कार मनुष्य द्वार निर्मित सामाजिक व्यवस्था को ही डीजिटल युग के अंधाधुध विकास के उपर हावी होना कही–ना–कही स्वयं मानव अस्तित्व के लिए एक विचारणीय प्रश्न है क्योंकि मनुष्य एक चेतनायुक्त प्राणी है और वह जो 84 करोड़ जीव यानियों में एकमात्र ऐसा प्राणी जिसमें कल्पनाशक्ति हो और यह कल्पना मानव की अन्य समस्त प्राणियों से उच्च बनाता है और जब प्रकृति आप मानव को यह सर्वोच्च पद प्रदान की है तो उसके कुछ दायित्व एवं भुमिका भी है और यह भूमिका एवं दायित्व समस्त प्रकृति जगत में अपनी सर्वोच्चता के साथ सामायोजन करते हुए साथ–साथ जीवन का आनंद लेना और उन्हें जीवन का समान अवसर देना।

वर्त्तमान समाजिक यथास्थिति को अवलोकन करने के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि जो हमारी भारतीय संस्कृति की नींव सामाजिक तानो–बानो का सुसंगठित स्वरूप और उसमें मूल्यों, प्रतिमानो, भूमिकाओं की सुसुनियोजित माला हमारे सामाजिक व्यवस्था को काफी मजबुती से जोड़ रखी हुई है और यही कारण है आज भी भारतीय संस्कृति संपूर्ण विश्व में अपना अस्तित्व 'अनेकता में एक्ता' के रूप में रखता है और आज वैदिक, मौर्य, गुप्त, तुगलक, सलतनत, मुगल अंग्रेजों और कुकरमुत्ते रूपी वर्तमान भारतीय राजनीति के जननायक नेता जिन्होंने भारतीय संस्कृति पर अनेको तरह से प्रहार रही प्रहार किए जा रहे परन्तु तोड़ नहीं पाई चूँकि हमारा पारिवारिक एवं सामाजिक व्यवस्था हमारी संस्कृति का सबसे जड़मूलक मजबूत आधार माना

* शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यायल, बोधगया
Email : kumarmukeshdharmpur@gmail.com, Mob. : 6200274954

जाता है और उन जड़ों में डिजिटल युग के द्रूतगति विकास नामक दीमक अपना घर बसाने की कोशिश में सुरंग निर्माण कार्य में सफल भी हो रहे है जिसकी एक स्पष्ट झलक हमें कोविड–19 महामारी के द्वारा दृष्टिगोचर हुआ।

कोविड–19 एक ऐसी महामारी जो वर्ष 2019 में विश्व में हमारे सामने आया जो कि अति संक्रमणयुक्त गाँव के गाँव को दो–चार दिनों में काल के गाल में समाने की क्षमता रखता था क्योंकि यह प्रथम बार ही सुना, देखा और झेला गया और अब रोकथाम हेतु उचित दवा एवं टीका यहाँ तक कि यह किस वायरस से हो रहा है इसका पता लगाने में भी मेडिकल एक्सपर्ट की कुछ समय चाहिए, जो भी इन्हें नहीं मिल पा रहा था, डॉक्टर भी जाँच के दौरान इसके संपर्क में आते और उनकी जीवन हानि होती। पूरे भारत में पूर्ण विराम (Lock down), घर में Quarantive और Sanitive Yourself जैसे शब्द उस दौरान सबसे ज्यादा बोले, सुने एवं पालन किए जाने वाले बन गए। व्यक्ति और समाज एक–दूसरे के पूरक है, व्यक्ति के समक्ष अस्तित्व एक व्यक्ति या मानव के रूप में अन्य प्रतिरूप सहन करना असंभव है चाहे हम जितना भी तकनीकी विकास, Artificial intelligence के रूप में मानव का समकक्ष एक चेतन स्वरूप खड़ा कर ले परन्तु मानव जैसा प्रकृति निर्मित चेतना और इस मानव चेतना का मानव जैसा प्रकृति चेतना और इस मानव चेतना का उत्कृष्ट संस्था समाज और इस समाज के मध्य होने वाले अंतः क्रिया एवं संबंधों का जो स्थान मानव जीवन में है जो मानव की आत्मा है उसका स्थान तो फिलहाल कोई भी उत्कृष्ट नवनिर्मित आविष्कार नहीं ले सकते है। यह कोविड–19 में हम मानवीय को अच्छी तरह समझा दिया गया। कह सकते है कि पारिवारिक एक सामाजिक जीवन के मध्य एक संतुलन, एक कड़ी का कार्य डिजिटल अविष्कार कर रहा है और बहुत सफल एवं सुगम भी है परन्तु मानव जीवन में परिवार और समाज का स्थान कोई नहीं ले सकता है और यह कोविड–19 में हमें अच्छी तरह समझा दिया। हम डिजिटल वर्ड को एक विकल्प के रूप में रख सकते है परन्तु मानव के मूल जीवन में परिवार एवं समाजिक वातावरण का स्थान कोई भी अब तक तो नहीं ले सका है और नाही ले सकता है क्योंकि ये हम मानव समाज की जड़ है और जड़ का कोई भी विकल्प नहीं होता है।

कोविड–19 एक अतिसंक्रमशील वायरस द्वारा होने वाली महामारी थी जिसमें हवा के संपर्क द्वारा जो व्यक्ति से व्यक्ति के मध्य तेजी से फैलता। इसने व्यक्ति संबंधों के मध्य एक दीवार बना दी No talk , No walk to each other संपूर्ण सामाजिक जन–जीवन थम–सा गया हर ओर lock down कही दूर–दूर तक व्यक्ति दिखते ही नहीं, रोड पर जहाँ गाड़ियों की लंबी–लंबी लाइने वहाँ अब जंगल से जानवर आ कर टहल रहे है और मानव जिसने अपने आप को जंगल तक विस्तार कर प्रकृति में हस्तक्षेप किए ही जा रहे हो कोरोना ने संपूर्ण मानव जीवन को उनके कंक्रीट रूप चारदिवारी में बंद रहने पर मजबूर कर दिया। क्योंकि कोरोना और कोरोना से होनेवाले मौत का मंजर अतिभयावह था। चारो ओर कोरोना का भय सभी अपने–अपने घर में आने को आतुर–व्याकुल जो कभी अपने को घर से दूर रहना ही status symbol समझते थे उन्हें घर, परिवार, समाज, अपनेपन का अपनो का घर के अनाज, घर के बने खाने परिवार रूपी छत का और परिवार का क्या महत्व है और क्यों आज भी इतना प्रासंगिक है जो हमारे पूर्वज नानी–नाना, दादी–दादा कहा करते थे वह भली–भाँति समझ में आ गया। पाश्चात्य शिक्षा, औद्योगिकीकरण, तकनीकी विकास ने भारतीय सामाजिक संरचना में हस्तक्षेप कर एक द्वन्द्व की स्थिति व्यक्तियों के मध्य उत्पन्न कर दी है जो उनके पारिवारिक मूल्य, प्रतिमान और उनकी वर्तमान उन्नत कही जानेवाली शिक्षा व्यवस्था द्वारा दी जाने वाली मूल्यो एवं प्रतिमानो में काफी अंतर होता जा रहा है जो सामाजिक और पारिवारिक व्यवस्था में हो रहे परिवर्तनों के रूप में दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

कोरोना काल एक ऐसा काल आया जिस समय व्यक्ति को अचानक अपने सारे सामाजिक गतिविधियों अंतः क्रियाएँ स्थगित करनी पड़ी, सब कुछ थम सा गया जो जहाँ थे उन्हें वही रूकने को कहा गया सभी आवगमन के साधन रोक दिए गए। लोगों के पास खाने को लाले पड़ने लगे पैसे है लेकिन सारे दुकाने, सारी ई–सर्विसेज व्यवस्था बंद करा दी ताकि कम से कम मानव संपर्क स्थापित हो सके और कोरोना के संक्रमण गति को किसी भी तरह कम किया जा सके। व्यक्ति अपने–अपने घर–परिवार जो बाहर काम करने, पढ़ाई करने या अन्य कारणों से परिवार शहर के बाहर है आने के तड़प रहे है आने के बाद भी 14 दिनों का एकांत (Quarantine) ताकि थोड़ी भी संभावना होने पर परिवार के अन्य सदस्य कोरोना की चपेट में ना आए। अचानक से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को कोरोना पीड़ित अर्थात् चलता–फिरता के बंद रूप में नजर आने लगे। चारों तरफ कोरोना वायरस का भय लोग अपनो की मदद को नहीं जा रहे है कही भय एवं आतंक से तो कही सावधानी हेतु व्यक्ति परिवार में भी रहकर अकेले–अकेले रहना मजबूरी है और समय की मांग

भी। कोविड ने परिवार एवं समाज के मध्यम द्वन्द की स्थिति उत्पन्न कर दी कारण कि आधुनिक सामाजिक व्यवस्था जहाँ व्यक्तिवादिता और व्यक्तिपरक सोच का व्यक्ति के विकास का एक मानदंड माना जाने लगा था वहाँ कोरोना ने बताया व्यक्ति के व्यक्तित्व समाज को दरकिनार कर व्यक्ति के स्व का तो विकास होगा परन्तु इस स्व को व्यक्ति के साथ खड़े होने के लिए समाज की जरूरत हर कदम पर पड़ेगी जिसका उदाहरण कोरोना के रूप में देख सकते है सभी एक–दूसरे से घनिष्ठता के साथ सहसंबंधित है और पारिवारिक एवं सामाजिक द्वन्द्व को अथवा समाज को। दोनों की अपनी महत्ता है दोनों अपना विशिष्ट स्थान रखते है मानव जीवन में। कोरोना जिस दौर में आया उस समय व्यक्तिवादिता, सामुदायिक एवं सामाजिक जीवन पर हावी हो रहा था। व्यक्ति का यह सोच एक भ्रम था कि तकनीक और व्यक्ति काफी हैं समाज और परिवार का महत्व उतना अधिक नहीं जितना कि बताया जाता है अपने पूर्वजों या माता–पिता ने कहा है। आज का युग डिजिटल युग है हर सामाजिक संगठन एवं संस्थाओं का कोई न कोई सहज एवं सुगम विकल्प हमारे पास उपलब्ध है बस आर्थिक क्षमता होनी है उस सेवा एवं विकल्प के क्रय की और यह काफी हद तक साकार सेवा एवं विकल्प के क्रय और यह काफी हद तक साकार एवं सफल होता भी दिखाई दे रहा था जबतक कोरोना नामक महाभारी स्वयं मानव निर्मित आपदा का आगमन हमारे जीवन में नहीं हुआ था। सब कुछ ठीक और डिजिटल युग का संपूर्ण विश्व काफी आनंद उठा रहे थे। अपने आविष्कार पर भी काफी गर्व कर रहे है थे तभी अचानक से कोरोना महामारी में हमारे इस भ्रम और दंभ को चूर–चूर कर दिया। क्योंकि कोरोना एक संक्रमणकारी महामारी थी तो उसमें पूर्णतः मानव–से मानव संपर्क पर प्रतिबंध लगा दिया गया और तकनीक का जो हम दम भर रहे थे उसकी वास्तविक मानव जीवन में समझ में आयी। तात्पर्य यह है कि हम संस्कृति से जाने जाते है– जो हम है–हमारा परिवार और हमारा समाज जबकि सभ्यता जो हमारे पास है – हमारे आस–पास की समस्त भौतिक सुख–सुविधाएँ जो मानव की जीवन की सुगम और सहज बनता है लेकिन मानव जीवन का आधार हमारी संस्कृति ही है जो किसी भी समाज का मानव जीवन है। कोरोना ने भले ही देश में तालाबंदी ला दी और आर्थिक नुकसान पहुँचाया लेकिन व्यक्तियों की व्यक्ति, परिवार और समाज को दरकिनार कर मानव जीवन नहीं आगे बढ़ सकता इसका आभास हो गया। जिस परिवारो ने एक–दुसरे के साथ मिलकर संयम से एक पॉजिटीव माहौल में साथ रहे सही सावधानियों का पालन किया स्वास्थ्य और भोजन का ख्याल रखा उन्होंने कम–से–कम मानसिक दबाव उस काल में महसूस किया। जिसे हम दबाब से लड़ने की नीति कह सकते है कि कोरोना ने हमें अपने आप को कैसे संतुलित रखा है यह बताया और यह भी किस तरह हमारे पूर्वज और गाँवो की संस्कृति उन समस्त मानव आपदाओं एवं उथल–पुथल हेतु कितनी तैयार और व्यवस्थित है जिसे कि हम आधुनिकता की अंधाधुध विकास के बेतरतीब दौर में महत्वहीन की संज्ञा, पिछड़ेपन की संज्ञा दे रहे थे। कोरोना ने वर्त्तमान पारिवारिक और सामाजिक तानेवाने में हो रहे बदलाव को दृष्टिगोचर किया और समझने का प्रयास किया हम इसे कमजोर करते जा रहे और यह भी बताया है इन ढ़ाँचों का कमजोर होना कितना बड़ा दुष्परिणाम के रूप में हमें ही नुकसान पहुँचा रहा है। समाज में बिना परिवार के कल्पना करना असंभव है। परिवार ही है जो हमें एक–दुसरे से जोड़ने अहम भूमिका निभाता है जो सुख दुःख में हमारे साथ खड़ा रहता है। एक–दुसरे के प्रति सम्मान और जिम्मेदारी का अहसास होता है। हम अपने के प्रति संवेदनशील होते है, अपनत्व व स्नेह की डोर से मजबूती से बंधे होते है चाहे कितने–दूर–दूर क्यो ना बसे हो और कोरोना में सबसे ज्यादा उसी अपनत्व की आवश्यकता महसूस हुई क्योंकि जिस आधुनिकता और विकास को अपना मान बढ़े थे उसे कोरोना ने ध्वस्त कर दिया। विकास एक सुनियोजित उर्ध्वगामी व्यवस्था की कहा जाता है परन्तु आज तितर–बितर और खोखला हो रहा है, जिस विकास को मानव के सर्वांगीण विकास हेतु किया जा रहा है परन्तु आज का विकास तो स्वयं मनुष्य के विनाश को रास्ता बनाया जा रहा है चाहे वह स्वयं मानव के शारीरिक मानसिक, आर्थिक संदर्भ में हो या परिवार के ढ़ाचे को विकास का नाम देकर पारिवारिक संरचना एवं मूल उद्देश्यों को खोखला करना हो या समाज रूपी व्यवस्था में अत्यंत आडम्बरो, कुरीतियों, रूढ़ियों, कुप्रथाओं, नियमों का समावेश नहीं आधुनिकता एवं पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के कारण मूल संरचना में अनुपयोगी बदलाव करना हो हम हर तरह से विकास की ऐसी नींव का समर्थन एवं बीजारोपण करने पर आतुर है जो आधारहीन, आभावहीन एवं अर्थहीन है।

कोविड–19 ने प्राचीन और वर्त्तमान परिवारिक एवं सामाजिक स्थिति को हमारे सामने लाया क्योंकि उस समय भाग–दौड़ की जिदंगी से हमें थोड़ा विराम मिला और हम क्या, क्या पाने के पीछे भाग रहे उसका हमारे जीवन में कितना औचित्य है तथा क्या है वही है जिसके लिए मानव विकास की सीढ़ी चढ़े जा रहा है

और ये समस्त प्रश्न प्रायः सभी व्यक्ति ने कोविड काल के दौरान महसूस किया और इसपर काफी शोध एवं विश्लेषण, चर्चा भी हुए कि हमें अपने मानव जीवन के वर्त्तमान यथा स्थिति पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

साहित्य समीक्षा

विभिन्न विद्वानों ने कोविड–19 के सामाजिक प्रभावों का अध्ययन किया है–

अमर्त्य सेन (2020) के अनुसार महामारी ने सामाजिक असमानताओं को और अधिक गहरा किया। उलरिख बेक ने यह स्पष्ट किया कि आधुनिक समाज में जोखिम सार्वभौमिक होते हैं, किंतु उनके प्रभाव असमान रूप से वितरित होते हैं।

एंथनी गिडेन्स (2021) के अनुसार वैश्वीकरण ने महामारी के प्रभाव को तीव्र और व्यापक बनाया।

भारत के संदर्भ में विभिन्न शोधों ने यह दिखाया कि लॉकडाउन के दौरान प्रवासी मजदूरों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी।

उद्देश्य

कोविड–19 के दौरान पारिवारिक संरचना में हुए परिवर्तनों का अध्ययन करना।

सामाजिक यथास्थिति और असमानताओं का विश्लेषण करना।

महामारी के कारण उत्पन्न सामाजिक और आर्थिक प्रभावों को समझना।

भविष्य के सामाजिक परिवर्तन की संभावनाओं का मूल्यांकन करना।

निष्कर्ष : कोरोना ने हमें यह सीख दि है कि चकाचौंध की दूनिया के साथ चलने में कोई हर्ज तो नहीं परन्तु सामाजिक सरोकार और पारिवारिक रिस्तों की मजुबुती ही मानव को मानव बनाती हैं, एवं यहीं भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता भी रहीं हैं।

संदर्भ सूची –

World Health organization (WHO). (2020). Covid-19 Stigma Identifying and addressing stigma and discrimination (Link) (https//www.who.mt/publication/item/WHO-2019-nCov-stigma-2020)

Ministry of Health and family welfare, government of India (2021), Guidelines for Managing stigma related to Covid-19 Link-(https://www.mohfw.gov.in/).

Kumar, R., & Single P. (2022). Social Attitudes towards Covid-19 survivors and their families in Urban India. Journal of Community health, 47(3), 512-520.

Patel, V., & McCrone, P. (2021). Social Exclusion and Covid-19.

कृषि आधारित उद्योग और ग्रामीण विकास का भौगौलिक अध्ययन

अजित सिंह*

कृषि आधारित उद्योग सामान्यतः वे उद्योग होते हैं जिनका कृषि से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संबंध होता है। इसमें कृषि कच्चे माल के साथ–साथ कृषि के आदानों के रूप में जाने वाली गतिविधियों और सेवाओं के आधार पर विभिन्न प्रकार की औद्योगिक, विनिमार्ण और प्रसंकरण गतिविधियों को शामिल किया गया हैं। ग्रामीण परिदृश्य में कृषि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है इसलिए ग्रामीण विकास का आधार हैं कृषि आधारित उद्योग जो इस प्रमुख आर्थिक गतिविधि पर पनपते हैं, ग्रामीण विकास में भी एक महत्वपूर्ण पहलू हैं।

प्रस्तावना

ग्रामीण क्षेत्र को शहरी सुविधाओं के प्रावधान के माध्यम से गांवों का आर्थिक उत्थान एक महत्वपूर्ण विचार बन गया। इसमें कृषि और खाद्य प्रसंस्करण कृषि निर्माण इकाइयों के विकास, कृषि सेवा इकाई द्वारा ग्रामीण देश के सभी हिस्सों के लिए एक विश्वसनीय और गुणवत्तापूर्ण तरीके के बिजली का प्रवाधान ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के सभी विस्तार के लिए शिक्षा और स्वास्थ शामिल है। परमाणु प्रोद्योगिकी, अंतरिक्ष और अवज्ञा प्रौद्योगिकी जैसे रणनीतिक क्षेत्रों का विकास राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास में इसके महत्व को देखते हुए वर्तमान अध्ययन सुक्ष्म स्तर का अध्ययन है। कृषि आधारित उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अध्ययन में कृषि उत्पाद प्रसंस्करण इकाइयों कृषि–उत्पाद निमार्ण इकाइयों कृषि आदानों, विनिमार्ण इकाइयों और कृषि सेवा केंद्रों पर ध्यान केंद्रित किया गया था।

ग्रामीण विकास हेतु प्रसंस्करण उद्योग

प्रसंस्करण उद्योग उन गतिविधियों को संदर्भित करता है जो कृषि वस्तुओं को विभिन्न रूपों में परिवर्तित करते हैं जो उत्पाद में मूल्यों जोड़ते हैं। कृषि आधारित उद्योग वे उद्योग हैं जिनका कृषि से प्रत्यक्ष या अप्रयक्ष संबंध है। कृषि प्रसंस्करण उद्योग विशेष रूप से खाद्य निर्माण तंबाकू और कपड़ा प्रसंस्करण वाणिज्यिक औद्योगिक क्षेत्र पर हावी हैं। इस अर्थ में कृषि – प्रसंस्करण को एक समूह के रूप में परिभाषित किया गया है। कृषि उत्पादों के संरक्षण और संचालन के लिए और इसे भोजन, चारा, फाइबर, ईंधन या औद्योगिक कच्चे माल के रूप में प्रयोग करने योग्य बनाने के लिए निम्नलिखित तकनीकी आर्थिक गतिविधियाँ आदि कृषि–प्रसंस्करण उद्योग गुंजाइश फसल से सभी कार्यों को शामिल करती हैं फसल के अंतिम चरण में सामग्री वांछित रूप मात्रा गुणावता और मूल्य में अंतिम उपयोगकर्ताओं तक पहुंचती हैं। प्राचीन भारतीय शास्त्र भोजन और औषधीय उपयोग के लिए कृषि उपज के संरक्षण का उल्लेख करते हैं और इसका विस्तृत विवरण है प्रसंस्करण के लिए कटाई के बाद और प्रसंस्करण प्रथाओं लेकिन अपर्याप्त ध्यान अतीत में कृषि–प्रसंस्करण क्षेत्र ने उत्पादक और उत्पादन दोनों को नुकसान पहुंचाया वही उपभोक्ता और इसने पर्यावरण को भी नुकासन पहुंचाया।

कृषि आधारित उद्योग परिर्माजन–

कृषि एवं औद्योगिक विकास एक दूसरे के पूरक हैं कृषि के बिना उद्योग धन्धों का विकास नहीं हो सकता हैं और उद्योग धन्धों के बिना कृषि का समुन्नत विकास हो पाना असम्भव हैं। कृषि उद्योग धन्धों के बीच समन्वय होना आवश्यक है अध्ययन क्षेत्र की अर्थव्यवस्था कृषि नियोजन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण कार्य किये है। वस्तुतः कृषि नियोजन सम्पूर्ण कृषि समुदाय को उत्पादन की ओर अग्रसर कर आर्थिक वृद्धि के एक उच्च दर को प्राप्त करने का प्रयास होता हैं। कृषि विकास योजना द्वारा भूमि की प्रत्येक इकाई के अनुकूलतम उपयोग को निर्धारित किया जाता है। इस उद्देश्य से नियोजन प्रक्रिया में आवश्यकतानुसार परिर्माजन एवं संशोधन की सुविधा के साथ ही समयानुसार बदलती परिथितियों के सन्दर्भ में उसमें परिवर्तन की सम्भावना बनी रहती है।

ग्रामीण विकास संकल्पना की वास्तविक रूपरेखा का अभ्युदय कब हुआ, इस संदर्भ में निश्चित एवं प्रामाणित रूप में कुछ कहना, करना कठिन प्रतीत होता है, फिर भी ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्राचीन काल में क्षेत्र के विद्यमान संसाधानों के आर्थिक विकास हेतु प्रादेशिक नियोजन आमतौर पर एक उपागम के

* प्रवक्ता इतिहास, राजकीय आश्रम पद्धति इंटर कालेज, लखीमपुर, खीरी

रूप में अपनाया जाता था। सामाजिक आर्थिक उन्नयन एवं संरचनात्मक परिवर्तन हेतु पूर्व नियोजन की प्रक्रिया एक अभिनव उपागम है जो मूलतः समाजवादी राष्ट्रों की देन है। भारत में योजनाबद्व ग्रामीण विकास की शुरूआत वर्तमान सदी में ही की गयी। इसका प्रारम्भिक श्रेय रवीन्द्रनाथ टैगोर को जाता है जिन्होंने 1920 ई में शान्ति निकेतन के पास स्थित कुछ गांवों के विकास हेतु योजना बनाई। महात्मा गांधी ने इसे अधिक यथार्थवाद रूप प्रदान किया, जब उन्होंने ग्रामीणों के आपसी सहयोग और सद्भावना से ग्रामीण क्षेत्रों की विभिन्न समस्याओं और आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने का इस प्रयोजना में मेयर महोदय ने ग्रामीण नियोजन के कतिपय आधारभूत मुद्दों, अच्छा आवास विकसित परिवहन एवं संचार तंत्र ग्रामीण उत्पादो की नियमित और शीध्र खपत, जल आपूर्ति एवं सिंचाई व्यवस्था और स्कूल, विकास हेतु कृषि कार्य, संचार शिक्षा स्वास्थ प्रशिक्षण समाज कल्याण एवं गृह सम्बन्धी योजनाओं की समीक्षा प्रस्तुत की इसके बाद लाटन ने 1959 ईं में ग्रामीण क्षेत्रों मे परिवर्तन में विभिन्न भौगोलिक तथ्यों पर तथा नाजियुत्त करीम 1967 ईं समाज में व्याप्त कमियां जो आर्थिक सामाजिक उन्नयन में बाधक के नियन्त्रण पर बल दिया।

1967 ईं में अल इण्डिया रूरल क्रेडिट रिफार्म कमेटी के सुझाव पर कृषिकों के तत्कालिक आवश्यकता एवं विकास के लिए लधु एवं सीमान्त तथा कृषि मजदूर विकास एजेन्सी गठित की गयी। इसके अन्तर्गत बैकों द्वारा भूमि विकास के लिए विभिन्न सुविधायों की गयी। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवसाय के अवसर बढाने हेतु तैयार की गयी नीतियों के अन्तर्गत आर्थिक वृद्वि कृषि का आधुनिकरण एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नये अवसर प्रदान करने का लक्ष्य रहा।

ग्रामीण विकास का केन्द्रीय लक्ष्य एक ऐसे विकास की प्रक्रिया का प्रारम्भ करता है जो लोगों के रहन–सहन के स्तर को उँचा उठा सके उनके लिए अधिक समूह और विभिन्नता पूर्ण जीवन की व्यवस्था कर सके। यह नियोजन तार्किक ढंग से भारतीय ग्रामीण विकास की विभिन्न समस्याओं का हल ढूंढता है, ग्रामीण के बीच व्याप्त आर्थिक और सामाजिक असमानताओं को दूर करता है। उपर्युक्त लक्ष्यों की प्राप्ति नियोजन के अभाव में सम्भव नहीं है। विभिन्न क्षेत्रों में विकास सम्बन्धी वरीयताएं रखी गयी है। यह नियोजन प्रजातांत्रिक ढंग से राजकीय निर्देशन में हो रहा हैं ग्रामीण विकास के सम्बन्ध में निम्न प्रविधियों का प्रयोग हुआ है संगठनात्मक संरचना में परिवर्तन मूल्य नीति के द्वारा साधनों का वितरण पूंजी संग्रह व साख व्यवस्था का विकास वित्तीय नीति का एक यंत्र के रूप में प्रयोग तथा विभिन्न विकास स्तरों पर नियंत्रण अकाल जांच आयोग ने कहा कि कृषि आधारित उद्योग वे है जो न केवल राज्य के औद्योगिकरण में सहायता करते हैं बल्कि खेतों के उत्पादों को संभालने के अलावा कृषि आदानों के साथ खेतों की आपूर्ति में भी शामिल है। नेशनल काउंसिल ऑफ एप्लाइड इकोनॉमिक रिसर्च 1965 ने कृषि आधारित उद्योग को परिभाषित किया करते हैं। इनमें बीज उर्वरक जरूरतों के लिए कृषि कच्चे माल उपयोग करते हैं इनमें केवल वस्तुएं शामिल हैं, बल्कि कृषि उपकरणों और मशीनरी की मरम्मत और सर्विसिंग भी शामिल है, कृषि आधारित उद्योगों को परिवर्तनकारी प्रक्रियाओं के विभिन्न स्तरों पर वर्गीकृत किया जा सकता है। सामान्य तौर पर पूंजी निवेश रूपांतरित तकनीकी जटिलता परिवर्तन की डिग्री के अनुपात में बढ़ जाती है। कच्चे माल या भोजन को बदलने का उद्देश्य प्रयोग करे योग्य रूप बनाना, भंडारण क्षमता को बढाना, अधिक आसानी से परिवहन योग्य रूप बनाना, और पौष्टिकता या पोषण गुणवता को बढाना है।

ग्रामीण उद्योग की विशेषताऐ–

कृषि आधारित उद्योग अपने कच्चे माल की तीन विशेषताओं के कारण अद्वितीय है– पहला–मौसमी, दूसरा–खराब होने, तीसरा–परिवर्तनशीलता।

लेकिन सभी कृषि आधारित उद्योग इन विशेषताओं को समान रूप से साझा नहीं करते हैं। कृषि उद्योगों में कच्चे माल की मात्रा और गुणवत्ता में परिवर्तनशीलता होती हैं मौसम में उतार–चढाव मिट्टी की स्थिति आदि के कारण मात्रा अनिशित है। मानवीकरण के कारण गुणवत्ता भिन्न होती हैं, कच्चे माल की मायावी बनी रहती है, भले ही पशु और पौधों के आनुवंशिकी में प्रगति हुई हो। विविधताएं उत्पादन शेडयूलिंग और गुणवत्ता नियंत्रण से संबंधित संचालन के संदर्भ में कृषि–औद्योगिक इकाइयों पर अतिरिक्त दबाव डालती है।

ग्रामीण उद्योग का प्रसंस्करण–

भारत में कृषि – प्रसंस्करण उद्योग आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और स्थानीय जरूरतों और निर्यात आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता रखता हैं। सरकार द्वारा वित्त पोषित ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम और सड़क और दूरसंचार नेटवर्क के माध्यम से बिजली आपूर्ति के मामले में इस

उद्योग के लिए सहायक बुनियादी ढांचा अच्छी तरह से स्थापित है। ग्रामीण कारीगरों और उपयोगकर्ताओं के लिए विनिर्माण में अच्छी तरह से स्थापित कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम भी हैं। हालांकि इस क्षेत्र को वर्तमान में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के खराब प्रदर्शन स्थानिय और विदेशी वित्त दोनों सलाह, सीमित विपणन जानकारी और विश्वसनीय बाजारों की कमी से उत्पन्न कई चुनौतियों का सामान करना पड़ रहा है।

कृषि उद्योग कृषि उत्पादों जैसे कृषि फसलों वृक्ष फसलों, पशुधन और मत्स्य पालन के प्रसंस्करण में मदद करता है और उन्हें भोजन और अन्य उपयोगी रूपों में परिवर्तित करता हें निजी क्षेत्र को अभी तक कृषि उद्योग की पूरी क्षमता का एहसास नहीं हुआ है चीनी कॉफी चाय और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ जैसे सॉस जेली, शहद आदि के लिए वैश्विक बाजार बहुत बड़ा है केवल आधुनिक तकनीक और गहन विपणन के साथ निर्यात बाजार का भी पूरा फायदा उठाया जा सकता है। इसलिए यह जरूरी है कि खाद्य निर्माता बदलती उपभोक्ता प्राथमिकताओं प्रौद्योगिकी आधुनिकरण नवाचार और कृषि – उत्पादन में नवीनतम रूझानों और प्रोद्योगिकी के समावेश को संपूर्ण खाद्य श्रृंखला के साथ समझें भारत और दुनिया में कृषि उत्पादों की कुल उत्पादन क्षमता अगला है। दशक तक दोगुना होने की संभावना है। इसके अलावा फल प्रसंस्करण मंत्रालय ने खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के कार्य योजना की स्थापना की थी। उद्देश्य खराब होने वाले खाद्य पदार्थ के प्रसंस्करण के स्तर को 6 प्रतिशत से बढकर 20 प्रतिशत मूल्यवर्धन को 20 प्रतिशत से 35 प्रतिशत से बढाकर 3 प्रतिशत और वैश्विक खाद्य व्यापार की हिस्सेदारी को 1.6 प्रतिशत से बढाकर 3 प्रतिशत करना है। कृषि में मशीनीकरण अथवा उन्नत आधुनिक क्रियाओं में बदल जायें यह मात्र एक दिन का कार्य नहीं हैं बल्कि दीर्धकालिक प्रक्रिया हैं। कृषि यंत्रीकरण में ट्रैक्टर सबसे महत्वपूर्ण कृषि – उद्योग में मुख्य रूप से मध्यवर्ती या अंतिम उपभोग के लिए कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण और संरक्षण की कटाई के बाद की गतिविधियाँ शामिल हैं। यह दुनिया भर में एक अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त तथ्य है, विशेष रूप से औद्योगिक विकास के संदर्भ में कृषि – उद्योगों का महत्व कृषि के सापेक्ष बढ़ता है क्योंकि अर्थव्यवस्थाएं विकसित होती हैं। इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि भोजन केवल उत्पादन नहीं हैं। भोजन में प्रसंस्कृत उत्पादों की एक विस्तृत विविधता भी शामिल है। इस अर्थ में कृषि उद्योग विकाशील देशों में विनिमार्ण क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण और महत्वपूर्ण हिस्सा है और औद्योगिक क्षमता निर्माण का साधन हैं।

कृषि आधारित उद्योग की समस्याऐं–

हर साल लाखों गरीब परिवार काम की तलाश में पलायन करते हैं। गांवों में आजीविका के धराशायी होने के कारण वे पलायन को मजबूर हैं ये संकटग्रस्त प्रवासी अक्सर अपने धरों को बंद कर लेते हैं, कुछ मामूली सामान ले जाते है और लंबी दूरी तय करते है अपने माता–पिता के साथ जाने वाले बच्चो को स्कूल छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ता हैं। 14 वर्ष से कम आयु के ऐसे बच्चों की संख्या लगभग 9 हर साल लाखों होने का अनुमान है। अपने गाँव से दूर होने के कारण वे उन जगहों से संबंधित नहीं होते हैं जहाँ वे जाते हैं और तेजी से अपने ही गाँवों में स्वीकृति खो देते हैं वे अपने समुदाय, संस्कृति और परंपराओं से अलग हो गए है, त्यौहारों ,मेलों, धार्मिक और सामाजिक कार्यो में भाग लेने में असमर्थ हैं। जो उनके जीवन का एक अभिन्न अंग हैं और इस प्रकार उनकी पहचान की भावना खो देते हें। राज्य की सीमाओं को परा करने वाले लोगों की भेद्यता और भी अधिक है क्योंकि वे खुद को अपने ठेकेदारों की दा पर अधिक से अधिक पाते हैं।

परंपरगत रूप से, किसान प्राकृतिक संसाधानों, श्रम कौशल और ज्ञान के साथ–साथ अपने निवेश का उपयोग करके या तो अपनी बात या वित्तीय ऋण से खाद्य और अन्य कृषि उत्पादों के उत्पादन होते हैं। लेकिन कुछ किसान दूसरों की तुलना में गरीब हैं। आमतौर पर वे भूमिहीन किसान होते हैं जिन्हें दूसरे लोगों की जमीन किराए पर देनी पड़ती है या दिहाड़ी मजदूर बन जाते हैं कृषि उत्पादों को आमतौर पर स्थानीय बिचौलिया या दलालों को निर्देशित किया जाता है, जो कभी–कभी बड़े राष्ट्रीय आपूर्तिकर्ताओं को वितरित करने से पहले किसानों को ऋण और बंधी हुई शर्तों के साथ उत्पादन के कारक प्रदान करते हैं। ये लोग फिर उत्पादों को बाजारों में बेचेगे। इस बाजारोन्मुखी ढांचे के तहत ज्यादतर किसान कीमत लेने वाले होते हैं। दुर्लभ परिस्थितियों को छोड़कर उनकी सौदेबाजी की शक्ति कम होती है जैसे कि बहुत जल्दी या देर से मौसम या उस अवधि के दौरान जहां आपूर्ति की कमी होती हैं। बाजार की मांग का जवाब देने की आवश्यकता है, लेकिन कोई सीधी पहुंच नहीं है, आसानी से खराब होने वाले उत्पादों से निपटना और ऋणी होना इस कम सौदेबाजी की शक्ति में योगदान करने वाले प्रमुख कारक है।

वर्तमान परिपेक्ष में–

वर्तमान में कॉर्पोरेट ने उत्पादन पक्ष को नियंत्रित करने में एक प्रमुख हिस्सा ले लिया है। कॉर्पोरेट द्वारा कृषि आमतौर पर बड़े पैमाने पर और राष्ट्रीय बाजारों या बाहरी बाजारों तक सीधी बाजार पहुंच होती है। कई कॉरपोरेट को स्थानिय बिचौलियों द्वारा कृषि उत्पादों की आपूर्ति की जाती है जबकि अन्य का किसानों के साथ अनुबंध हो सकता है। मालिको और कारपोरेटों में काम करने वाले लोगों के लिए, कृषि सिर्फ एक आर्थिक क्षेत्र है और उनकी मूख्य चिंता उनकी आजीविका का एक अभिन्न अंग होने के बजाय हानि लाभ और वित्तीय लाभ के बारे में है। राष्ट्रीय या क्षेत्रीय स्तर पर कृषि की स्थिति के बारे में चर्चा करते समय आपूत्रि श्रृंखला में विभिन्न खिलाड़ियों, कॉर्पोरेट, बिचौलियों और छोटे और मध्यम किसानों के बीच अंतर करना चाहिए– ताकि उन पर प्रभाव और किसी विशेष स्थिति के प्रति उनकी प्रतिक्रिया को उनके संदर्भों के तहत स्पष्ट रूप से समझा जा सके। और वर्तमान बाजार संरचनाएं। समायोजन खाद्य आपूर्ति खाद्य मूल्य छोटे पैमाने पर कृषि उत्पादन व्यवसाय, लाभ आदि। संसाधन आधार जैसे। बीज, पानी, भूमि, जंगल, जैव विविधता आदि। कॉर्पोरेट कृषि मूल्य, जीवन का तरीका, संस्कृति संबंध, आय आदि।

निष्कर्ष–

वर्तमान स्वरूप एवं ग्रामीण विकास के दृष्टिगत चयनित किया गया है वस्तुतः विभिन्न विद्वानों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों के कृषि एवं औद्योगिक विकास विचार के विश्लेषण के लिए आन्तरिक एवं वाह्य गुणाकों को सम्मिलित किया जाता है। सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन क्षेत्र के दृष्टिगत जिन विचारों का चयन किया गया हैं उनमें कृषि एवं विकास के विभिन्न पक्षों को समाहित करने का प्रयास किया गया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

विल्किसन और आर रोचा, "द एग्रो–प्रोसेसिंग सेक्टरः अनुभवजन्य सारांश, हालिया रुझान और विकास प्रभाव", अंतर्राष्ट्रीय कृषि–उद्योग फोरम के लिए व्यापक पेपर, नई दिल्ली, अप्रैल 2008 ।

खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ), वैश्विक संगठन, "सामाजिक आर्थिक विकास और आर्थिक, स्थिति में कमी के लिए कृषि–व्यवसाय का महत्व", संपत्ति विकास पर विश्व संगठन आयोग के लिए चर्चा पत्र, सोलहवां सत्र, न्यूयॉर्क, मई, 5 – 16, 2008.

ए.ओ. कमसंरं "खाद्य निर्माण में सामग्री उत्पादकता", यांक जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल सोशल साइंस, वॉल्यूम। 74, नंबर 1, फरवरी 1992, पीपी. 177–185।

आर.ई. लोपेज, "कनाडाई खाद्य प्रक्रिया उद्योग के भीतर आपूर्ति प्रतिक्रिया और निवेश", अमेरिकन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल सोशल साइंस, वीओ। 67, नंबर 1, फरवरी, 1985, पीपी. 40–47

एस.एम. डाइट्ज़ और एस. मती, एसेसमेंट ऑफ़ द स्मॉल स्केल फूड प्रोसेस सब सेक्टर इन तंजानिया और अफ्रीकी राष्ट्र, आईएसबीएन, 2000।

Journal of the Association of North Indian Geographers Vol. 36, No. 1 June 2006,pp. 136.

Prakash Rao, V.L.S. (1963) Regional Planning Theoretical Approach, Calcutta, P. 5.

Kuklunski, A.K. (1978), Some Basic Issues in Regional Planning and National Development in Mishra R.P. et. Al. (eds.) Vikas Publication, New Delhi, pp.5.

Mayer, A. and Associate (1959) : Pilot Project India the study of Rural Development of Etawah, Uttar Pradesh Univ. of Calfornia Press, Berkeley and Los Angeles, 367.

Dubey, S.C. (1958) India's Changing Villages, Bombay.

Lawtan, G.H. (1958-59), India's Changing Villages, Royal Geographical Society of Australia South Austrailian Branch paer (60), P. 17-24.

शास्त्रीय संगीत में बंदिशें और उसमें निहित सौन्दर्य तत्व

डॉ. नेहा बंसल*

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत जो मुख्यतः राग और ताल पर आधारित है, उसमें 'बंदिश' वह आधार है जिसके बिना संगीत अपने पूर्ण रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दों में बंदिश वह आधार है, जिसके द्वारा राग–विस्तार व उससे संबंधित सृजनात्मक कुशलता के विभिन्न प्रकार प्रस्तुत किए जा सकते हैं, संगीत कला के क्षेत्र में जब शब्द को स्वर, ताल, पद्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तो वह एक राग की बंदिश बन जाती हैं। बिना बंदिश के राग का कोई बिम्ब निश्चित नहीं हो सकता। किसी भी कला को जब उसके आयामों द्वारा व्यक्त किया जाता है, तो उस कला का सम्पूर्ण अस्तित्व हमारे समक्ष व्यक्त हो जाता है–यथा चित्रकार की कला का वह व्यक्तित्व 'चित्र', मूर्तिकार की कला की उपज 'मूर्ति', कवि की 'कविता' और संगीतकार द्वारा प्रस्तुत किसी राग की 'बंदिश'।

बंदिश शब्द का अर्थ – सामान्य रूप में बंदिश शब्द से तात्पर्य है–बंध, बंधा, बंद किया हुआ, जुड़ा हुआ, विशेष प्रकार की पद रचना इत्यादि। एक ऐसी रचना जो स्वर, ताल व पद से युक्त होती है–बंदिश कहलाती है। हिंदुस्तानी संगीत के क्षेत्र में बंदिश शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया जाता रहा है जैसे–बाँधने की क्रिया या भाव, पहले से किया हुआ प्रबंध, गीत, कविता आदि की शब्द योजना। बंदिश शब्द जिसका प्रयोग हिंदुस्तानी संगीत की विधाओं में 'निबद्ध रचनाओं' के लिए होता है। भातखण्डे जी ने अपनी क्रमिक पुस्तक मालिका में रागों की बंदिशों के लिए 'चीज़' शब्द का प्रयोग किया है। बंदिश, चीज़ अथवा स्थाई की काव्य विधा भावों से साकार होती है। भावों का जितना अधिक समावेश 'चीज़' के काव्य में होता है, वह समग्रतः उसकी युग–युगान्तर तक चलने वाली धरोहर होती है। पीढ़ी–दर–पीढ़ी वह अविरल रूप से हस्तांतरित होती जाती है। शास्त्रीय संगीत की बंदिश अथवा चीज़ स्वरों पर अवलंबित है लेकिन शब्द और भाषा भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यदि राग के स्वरों की भाषा मूक होती है, तो शब्द या भाषा स्वरों को वाणी देते है और कलात्मकता प्रदान करते है। सभी प्रकार के गायन–वादन की बंदिशों अथवा उनके निबद्ध रूप को रचना कहा जाता है। बंदिश अथवा रचना को अंग्रेजी में कम्पोजीशन कहते हैं। इसे ही हम आज बंदिश तथा वाद्य संगीत के संदर्भ में गत कहते हैं।

राग और बंदिश – राग शब्द बहुत से अर्थों का बोध कराता है। हर्ष, शोक, उत्साह, क्रोध आदि भावों की अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न स्वरावलियों के समन्वय को निर्धारित किया गया है। बंदिश राग की एक विशिष्ट आकृति है जिसमें सौंदर्य को प्रदर्शित करने में ताल भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हर बंदिश की एक विशिष्टता होती है जिससे उसकी आकृति का सौंदर्य खिल उठता है तथा बंदिश के महत्व का रूप सजीव हो उठता है और राग में बंदिश का रूप इस प्रकार कायम हो उठता है कि बिना बंदिश का निर्वाह किए राग का कोई भी बिम्ब निश्चित नहीं हो सकता। राग में बंदिश के महत्व के संबंध में स्व. उस्ताद मुश्ताक हुसैन खाँ के अनुसार, "किसी भी राग की बंदिश (जो राग अभी तक सीखा न हुआ हो) को सही रूप से अपने जहन में उतार लो और इसी बंदिश के स्वरों के चलन के हिसाब से राग की बढ़त शुरू कर दो अर्थात् बंदिश के इर्द–गिर्द चलो तुम्हें स्वयं राग का ढाँचा मालूम हो जाएगा।"

ग्वालियर घराने के विशिष्ट प्रतिनिधि श्री लक्ष्मण कृष्ण राव पंडित के अनुसार, "बंदिश राग का परिधान है, अगर बिना परिधान के राग को प्रस्तुत किया जाये तो वह महत्वहीन हो जाएगा अतः राग का विस्तार असंभव हो जाएगा और जहाँ तक बंदिश के महत्व का प्रश्न है, बंदिशों में राग छिपे होते हैं, एक राग में जितनी बंदिशें सीखी जाएगी उतने ही प्रकार से राग को प्रस्तुत करने का तरीका मालूम होगा और उसके मुख्य घटक स्थल तथा अवयवों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

बंदिश का महत्व – हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में राग के स्वरूप को दर्शाने हेतु बंदिश की महत्वपूर्ण भूमिका है। बंदिश एक ऐसा माध्यम है जो राग पहचान ही नहीं अपितु उसकी रंजकता का एक मुख्य कारण है। बंदिश अपने आप में एक ऐसी चमत्कारिक शक्ति लिए होती है जो मनुष्य को अपनी काव्य या शब्द रचना,

---

* पीएच.डी., एम.फिल (संगीत एवं ललित कला संकाय), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ताल एवं राग के माध्यम से अपनी ओर आकर्षित करती है कुछ लोकप्रिय बंदिशें इतने पुराने समय से चली आ रही है कि उनके प्रारंभ करते ही श्रोतागण को यह ज्ञात हो जाता है कि कलाकार कौन सा राग आरंभ करने जा रहा है।

किसी भी राग का महत्व प्रस्तुतीकरण श्रेष्ठ हो उसके लिए यह अति आवश्यक है कि उस राग में प्रयोग की जाने वाली बंदिश का रूप सही हो। राग की प्रकृति के अनुसार ही बंदिश का साहित्य (पद) होना चाहिए। एक ही राग की प्रत्येक बंदिशों की गढ़न तथा चलन भिन्न–भिन्न होती हैं। क्योंकि प्रत्येक बंदिश की स्वर–रचना में भिन्नता होती है।

इस प्रकार शास्त्रीय संगीत में बंदिशों में रागों की प्रभावशाली परंपरा का दर्शन होता है, जिनके माध्यम से भारतीय राग संगीत में शुद्धता व सूक्ष्मता का सौंदर्य प्रतिबिंबित होता है। बंदिश भारतीय संगीत के स्तम्भ व उसकी अमूल्य निधि के रूप में भारतीय शास्त्रीय संगीत के गुरू–शिष्य परंपरा की प्रतीक भी है। एक ही राग में भिन्न–भिन्न स्वरूपों की अनगिनत बंदिशें हो सकती है। यह हमारे शास्त्रीय संगीत की एक विलक्षण बात है।

बंदिश में निहित सौंदर्य तत्व – बंदिश प्रस्तुत करने के कुछ घटक या अवयव होते है, जो उसे सुन्दरता प्रदान करते हैं। कलाकार की मन की अस्फुट, अरूप, अकांक्षा को मूर्त रूप देने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राग की अवतारणा के समय संगीत में विशिष्ट शैली के अनुरूप स्वर का लगाव, कण, खटके, मुर्की, अलंकार आदि का सही प्रयोग, उचित लय का प्रयोग, भाव प्रधान आलाप, चमत्कारिक ताने तथा राग–भाषा एवं बंदिश के अनुसार ताल का सही निर्धारण करके सुनियोजित रूप प्रयोग करने से ही संगीत के आधार स्वरूप मूलभूत तत्व 'रस' की प्राप्ति बंदिश के इन अंगों के बिना संभव नहीं है।

आलाप – किसी राग के वादी–संवादी तथा विशेष स्वरों का प्रयोग करते हुए राग नियमों के अनुसार क्रमिक विस्तार करना तथा साथ ही उसे वर्ण, गमक, अलंकार आदि से विभूषित करना ही उस राग का आलाप है। आलाप में बंदिश के शब्दों का अभाव होता है। इस प्रकार श्रोताओं के मन में राग का स्वरूप बिठाने के लिए संगीतकार गीत अर्थात् बंदिश आरंभ करने से पूर्व राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरों को थोड़ी देर तक बिना ताल के धीमी लय में प्रस्तुत करता है। बंदिश गाने के बाद जो आलाप किया जाता है वह आकार में होता है या बंदिश के शब्दों या बोलों के साथ किया जाता है। यह आलाप तालबद्ध होते हैं। यदि आलाप राग को दिव्यात्मकता प्रदान करता है तो बंदिश उसका प्रदर्शन करती है।

बहलावा – बहलावा बोल आलाप से ही मिलता–जुलता गायन है। बहलावे छोटे–छोटे स्वर समुदायों में शब्दों को लगा देने से बनते हैं इनमें तबले के साथ छोटे–छोटे बहलावे बनाकर कभी सम पर आते है तो कभी सम निकल जाने पर आधी मात्रा का मौन करके छोटी सी तान लगाकर या सरगम लेकर सम पर अचानक आ जाते हैं। इसी तरह अन्य प्रकार से भिन्न–भिनन समुदायों, शब्द समुदायों आदि को छोटे–छोटे खिलवाड़ के रूप में गायक प्रस्तुत करते हैं तथा तबला वादक भी उसी रूप में उन टुकड़ों के उत्तर देते हैं। यह आनंददायक तथा चमत्कार–पूर्ण कार्य बंदिश को सुन्दरता प्रदान करता है।

बोलतान – बहलावे के पश्चात लय थोड़ी बढ़ा ली जाती है और तान आरंभ की जाती है जो शब्दों से युक्त होती है। शब्द के अनुकूल ही तान में आकार इकार आदि का प्रयोग छोड़े हुए आलापों का संबंध बनाए रखती है बोलतानों में छंद पर ध्यान देना अतिआवश्यक है। इसके लिए ताल पर बहुत अच्छी पकड़ होनी चाहिए। इसमें शब्दों को स्वरों के साथ दुगुन, तिगुन या आड़ आदि लयों में दिखाते हुए भी तान प्रधान गायन–वादन किया जाता है। शब्दों का यथा स्थान व भावानुकूल रूप में स्वरों के साथ समन्वय होना चाहिए तभी भाव परिपोष, रसानुभूति व गायन–वादन में सौंदर्य प्रस्तुत किया जा सकेगा।

तान – तान का मुख्य कार्य गायन–वादन में वैचित्र्य व चमत्कार बढ़ाना है। यह तभी संभव हो सकता है जब ताने योग्यता–पूर्वक व योग्य प्रमाण में ली जाए। आज लय की तान का सबसे अधिक प्रयोग ख्याल तथा टप्पा गायन शैलियों में किया जाता है। ताने बराबर लय से लेकर दुगुन, तिगुन, चौगुन, अठगुन, सोलहगुन व कभी–कभी इससे भी तेज लयों में ली जाती है। द्रुत ख्याल में तानों का अधिक प्रावल्य रहता है।

सरगम – सरगम भी बंदिशों के सौंदर्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। ख्याल गायकी में इसकी बड़ी मान्यता है आलाप, बोलतान व तान आदि करते समय बीच–बीच में या तानों के पश्चात् अंत में भी सरगम ली जा सकती है। सरगम लेते समय गायक अपने ताल का ज्ञान, आड़, कुआड़ आदि लय के प्रकार भी दिखाकर चमत्कारिक प्रयोग करने के प्रयत्न करते हैं। ताल के साथ इसका बहुत अच्छा सामंजस्य बैठता है और बंदिश सुन्दर प्रतीत होती है।

गमक – जब स्वरों को विशेष रूप से सौंदर्यपूर्वक कम्पित किया जाता है तो उसे गमक कहते हैं। संगीत समयसार में पार्श्वदेव ने कहा है कि संगीत में जब कोई स्वर अपने श्रुति स्थान से दूसरी श्रुति की छाया मूल श्रुति के स्थान पर पड़ती हुई भासमान होती है। यह स्वरों का कम्पन बंदिश को सुन्दरता प्रदान करता है। इनके अतिरिक्त मींड, मुर्की, कण, खटका, आंदोलन आदि क्रियाएँ बंदिश को अलंकृत करती है।
संक्षेप में, बंदिश में सौंदर्य तब आता है जब ये सभी तत्व (रस, लय, स्वर, शब्द) मिलकर राग के सार को सफलतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं, जिससे वह सुनने में मधुर, आकर्षक और आनंददायक लगती है।

संदर्भ सूची

डॉ. अरूण मिश्रा, भारतीय कंठ संगीत और वाद्य संगीत, पृ.सं.–199–201
विमलकांत राय चौधरी, भारतीय संगीत कोष, पृ.सं.–99–100
विजया चांदोरकर, भारतीय संगीत में निबद्ध तथा अनिबद्ध गान, पृ.सं.–2
डॉ. श्रीमती मधुरलता भटनागर, भारतीय संगीत में सौंदर्य एवं रूप विधान, पृ.सं.–158–159
पं. व्यास, सी. आर., राग प्रस्तुति–बंदिशों के माध्यम से (मुक्त संगीत संवाद), पृ.सं.–35
डॉ. मधुबाला सक्सेना, ख्याल शैली का विकास, पृ.सं.–109
संगीत पत्रिका मासिक नवंबर–2012, पृ.सं.–8
शैलेन्द्र कुमार गोस्वामी, हिन्दुस्तानी संगीत के महान रचनाकार सदारंग अदारंग, पृ.सं.–85
रमण लाल मेहता, आगरा घराना परंपरा, गायकी और चीजें, पृ.सं.–43

वैश्वीकरण और भारतः भ्रष्टाचार के विशेष परिप्रेक्ष्य में

दीपेश कुमार*
डॉ. (प्रो.) दिनेश प्रसाद सिन्हा**

शोध-सार (Abstract)

वैश्वीकरण (Globalization) एक बहुआयामी प्रक्रिया है जो बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में शुरू हुई और जिसने वैश्विक आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक ढांचों पर गहरा प्रभाव डाला है। भारत में 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद, वैश्वीकरण ने तेजी से गति पकड़ी, जिससे विदेशी निवेश, बहुराष्ट्रीय कंपनियों का आगमन, तकनीकी नवाचार और सेवा क्षेत्र का विस्तार हुआ। हालांकि, इसने आर्थिक विकास और उपभोक्ता विकल्पों में वृद्धि की, इसके साथ ही भ्रष्टाचार के स्वरूप और प्रकृति में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आए। यह शोध सन्देश भारत में वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार के बीच संबंधों का आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

वैश्वीकरण से पहले भारत में भ्रष्टाचार मुख्यतः प्रशासनिक विलम्ब, लाइसेंस-परमिट प्रणाली, सीमित संसाधनों और केंद्रीकृत शासन से जुड़ा था। लेकिन बाद में, यह अधिक संगठित और तकनीकी रूप से जटिल होता गया। विदेशी निवेश, सार्वजनिक-निजी भागीदारी (PPP), बड़े बुनियादी ढांचे के प्रोजेक्ट्स और अन्य क्षेत्रों में घोटालों ने भ्रष्टाचार को नए आयाम दिए। अध्ययन में कहा गया है कि वैश्वीकरण ने पारदर्शिता, प्रतिस्पर्धा और सुशासन को बढ़ावा दिया, लेकिन इसके परिणामस्वरूप पूंजी-प्रधान और कॉर्पोरेट-प्रेरित भ्रष्टाचार भी उभरा।

मुख्य शब्द (Keywords) : वैश्वीकरण, भ्रष्टाचार, भारत, उदारीकरण, निजीकरण, सुशासन, पारदर्शिता, बहुराष्ट्रीय कंपनियां, ई-गवर्नेंस, संस्थागत सुधार, सामाजिक असमानता, आर्थिक विकास

भूमिका (Introduction)

भारत में वैश्वीकरण ने निजीकरण और उदारीकरण को बढ़ावा देकर सरकारी नियंत्रण को कम किया। इसने प्रशासनिक कुशलता में कुछ सुधार किया, लेकिन कमजोर नियामक संरचना और राजनीतिक संरक्षण के कारण भ्रष्टाचार को भी बढ़ावा मिला। बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्विक वित्तीय संस्थानों के साथ समझौतों में पारदर्शिता की कमी ने भ्रष्टाचार को संरचनात्मक समस्या बना दिया। यह शोध इस बात को स्पष्ट करता है कि वैश्वीकरण ने भ्रष्टाचार को केवल देश स्तर तक सीमित न रखते हुए, इसे वैश्विक संदर्भ से जोड़ा।

सामाजिक दृष्टिकोण से, वैश्वीकरण ने असमानता को बढ़ाया, जिसका असर विशेष रूप से कमजोर वर्गों पर अधिक पड़ा। सार्वजनिक वितरण प्रणाली, शिक्षा, स्वास्थ्य और ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार ने गरीबी उन्मूलन के प्रयासों को कमजोर किया। हालांकि डिजिटल इंडिया, ई-गवर्नेंस, डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर (DBT) और सूचना का अधिकार अधिनियम (RTI) जैसे सुधारात्मक कदम भ्रष्टाचार पर नियंत्रण में सहायक रहे, लेकिन उनकी प्रभावशीलता सीमित रही।[1]

यह अध्ययन यह भी बताता है कि वैश्वीकरण ने भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलनों और नागरिक जागरूकता को भी मजबूती प्रदान की। अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं और मीडिया ने भारत में भ्रष्टाचार को वैश्विक विमर्श का हिस्सा बना दिया। फिर भी, भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिए केवल वैश्विक दबाव पर्याप्त नहीं है; इसके लिए मजबूत संस्थाएं, नैतिक नेतृत्व और सामाजिक भागीदारी की आवश्यकता है।

* पी.जी. राजनीति विज्ञान विभाग, म.वि.वि. बोधगया, बिहार, 824234
(deepworld700@gmail.com)
** पी.जी. राजनीति विज्ञान विभाग, म.वि.वि. बोधगया, बिहार, 824234

अंत में, यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार के बीच संबंध न तो पूरी तरह से सकारात्मक है और न ही पूरी तरह से नकारात्मक। यह एक जटिल और द्वंद्वात्मक संबंध है, जिसमें अवसर और चुनौतियां दोनों समाहित हैं। भारत में, वैश्वीकरण तब ही सार्थक होगा जब आर्थिक विकास के साथ पारदर्शिता, जवाबदेही और सामाजिक न्याय को भी समान महत्व दिया जाए। भ्रष्टाचार पर प्रभावी नियंत्रण के बिना, वैश्वीकरण समावेशी और सतत विकास का साधन नहीं बन सकता है।[2] इसलिए, भारत को वैश्वीकरण के लाभों को अपनाते हुए भ्रष्टाचार-निरोधक संस्थागत ढांचे को और मजबूत बनाना आवश्यक है।

आधुनिक वैश्विक व्यवस्था में, वैश्वीकरण एक महत्वपूर्ण और व्यापक प्रक्रिया बन चुकी है, जिसने राष्ट्रों की पारंपरिक सीमाओं को कमजोर करते हुए उन्हें आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से आपस में जोड़ दिया है। इसके माध्यम से वैश्विक अर्थव्यवस्थाएँ आपस में निर्भर हो गई हैं, और उत्पादों, सेवाओं, पूंजी, तकनीक और सूचनाओं का मुक्त प्रवाह संभव हो सका है। यही कारण है कि 21वीं शताब्दी को वैश्वीकरण का युग माना जाता है।[3] विकासशील राष्ट्रों, जैसे भारत, के लिए वैश्वीकरण विकास और प्रगति के अवसर प्रस्तुत करता है, लेकिन इसके साथ ही कई नई चुनौतियाँ भी सामने लाता है, जिसमें भ्रष्टाचार एक महत्वपूर्ण समस्या के रूप में उभरता है।

भारतीय संदर्भ में, वैश्वीकरण की प्रक्रिया 1991 में लागू हुई नई आर्थिक नीति के साथ शुरू हुई। इस नीति के तहत उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के द्वारा भारतीय अर्थव्यवस्था को अंतरराष्ट्रीय बाजार के लिए खोला गया। इसके परिणामस्वरूप विदेशी निवेश, औद्योगिक वृद्धि, तकनीकी विकास और सेवा क्षेत्र के विस्तार में तेजी आई। भारतीय अर्थव्यवस्था ने तेजी से विकास किया, और भारत वैश्विक आर्थिक प्रणाली का एक महत्वपूर्ण भागीदार बन गया। हालांकि, इस आर्थिक परिवर्तन ने शासन व्यवस्था, प्रशासनिक ढांचे और नीति निर्माण प्रक्रिया पर भी गहरा असर छोड़ा।

भारत में भ्रष्टाचार एक जटिल और दीर्घकालिक समस्या रही है, जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रगति में रुकावट डालती आई है। भ्रष्टाचार न केवल सार्वजनिक संसाधनों के दुरुपयोग को बढ़ावा देता है, बल्कि यह शासन की विश्वसनीयता को भी कमजोर करता है।[4] वैश्वीकरण के संदर्भ में भ्रष्टाचार का विश्लेषण महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसने पारंपरिक भ्रष्टाचार के स्वरूप में बदलाव लाया है। वैश्वीकरण ने पारदर्शिता, प्रतिस्पर्धा और तकनीकी नवाचार को बढ़ावा दिया है, जबकि इसके साथ बड़े आर्थिक घोटाले, कॉर्पोरेट-राजनीतिक गठजोड़ और नीति-स्तरीय भ्रष्टाचार जैसी नई समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं।

इस प्रकार, वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार के बीच संबंध को सीधे तौर पर नहीं समझा जा सकता। यह संबंध जटिल और बहुआयामी है, जिसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू शामिल हैं। इस शोध लेख का मुख्य उद्देश्य भारत के संदर्भ में वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार के अंतर्संबंधों का गहराई से विश्लेषण करना है।[5] इस अध्ययन के जरिए यह समझने का प्रयास किया गया है कि वैश्वीकरण ने भारत में भ्रष्टाचार की प्रकृति, स्तर और प्रभाव को कैसे प्रभावित किया है और किन नीतिगत व संस्थागत सुधारों से वैश्वीकरण को भ्रष्टाचार-नियंत्रण का प्रभावी साधन बनाया जा सकता है।

वैश्वीकरण की अवधारणा (Concept of Globalization)

वैश्वीकरण का तात्पर्य देशों के बीच वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी, तकनीक और विचारों के स्वतंत्र प्रवाह से है। इसमें शामिल हैं:

अंतरराष्ट्रीय व्यापार की वृद्धि

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI)

बहुराष्ट्रीय कंपनियों की महत्वपूर्ण भूमिका

वैश्विक संस्थाओं का प्रभाव

भारत में वैश्वीकरण की शुरुआत 1991 की नई आर्थिक नीति से हुई।

भारत में वैश्वीकरण का विकास (Globalization in India)

1991 से पहले भारत की अर्थव्यवस्था बंद और नियंत्रित थी। आर्थिक संकट के चलते सुधारों की आवश्यकता पड़ी, जिसके परिणामस्वरूप:

लाइसेंस राज का समाप्त होना

निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन

विदेशी निवेश की स्वीकृति

अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं से सहयोग

इन कदमों के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था वैश्विक अर्थव्यवस्था से जुड़ गई।

भ्रष्टाचार: अर्थ और स्वरूप (Meaning and Nature of Corruption)

भ्रष्टाचार का आदान-प्रदान सार्वजनिक पद या शक्ति का निजी लाभ के लिए दुरुपयोग किया जाना है। भारत में भ्रष्टाचार के मुख्य प्रकार हैं:

रिश्वतखोरी

घोटाले

भाई-भतीजावाद

कर चोरी

प्रशासनिक अनियमितताएँ

यह समस्या राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक स्तरों पर व्याप्त है।

वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार का संबंध (Globalization–Corruption Nexus)

वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार का संबंध जटिल है।

सकारात्मक प्रभाव

पारदर्शिता की वैश्विक मांग

अच्छे प्रशासन पर जोर

ई-गवर्नेंस और डिजिटल सेवाएँ

वैश्विक निगरानी और रैंकिंग

इन पहलुओं से कुछ पारंपरिक भ्रष्टाचार के रूपों में कमी आई।

नकारात्मक प्रभाव

बड़े वित्तीय घोटालों का aumento

कॉर्पोरेट और राजनीतिक गठजोड़

विदेशी कंपनियों द्वारा नियमों का उल्लंघन

टैक्स हेवन का उपयोग

इन कारणों से भ्रष्टाचार और अधिक संगठित और जटिल हो गया।

बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ और भ्रष्टाचार

वैश्वीकरण के बाद बहुराष्ट्रीय कंपनियों की अव्यक्त भूमिका बढ़ी है, जैसे:

लाइसेंस और ठेके पाने के लिए रिश्वत

पर्यावरण और श्रम कानूनों का उल्लंघन

मुनाफे के लिए कर चोरी

हालांकि, कुछ कंपनियाँ नैतिक व्यापार और सामाजिक जिम्मेदारी को भी बढ़ावा देती हैं।

राजनीति, नीति-निर्माण और भ्रष्टाचार

वैश्वीकरण ने राजनीति पर भी प्रभाव डाला है।

चुनावी चंदे में पारदर्शिता की कमी

कॉर्पोरेट प्रभाव

नीतियों का निजीकरण

इन कारणों से भ्रष्टाचार का एक नया रूप उभरा है।

डिजिटलीकरण और भ्रष्टाचार नियंत्रण

वैश्वीकरण के साथ तकनीकी प्रगति हुई है जैसे:

डिजिटल भुगतान

ऑनलाइन सेवाएँ

प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT)

इनसे बिचौलियों की भूमिका कम हुई और छोटे स्तर के भ्रष्टाचार में कमी आई।

सामाजिक एवं ग्रामीण प्रभाव

ग्रामीण भारत में वैश्वीकरण के परिणाम मिश्रित रहे हैं:

बैंकिंग और वित्तीय समावेशन में वृद्धि

स्वयं सहायता समूहों को बढ़ावा

हालांकि,

सब्सिडी वितरण में भ्रष्टाचार

भूमि अधिग्रहण में अनियमितताएँ

अब भी विद्यमान हैं।

भ्रष्टाचार नियंत्रण हेतु प्रयास

भारत में भ्रष्टाचार रोकने के लिए निम्नलिखित पहलों की गई हैं:

सूचना का अधिकार अधिनियम

लोकपाल और लोकायुक्त

ई-गवर्नेंस

डिजिटल इंडिया

वैश्वीकरण ने भ्रष्टाचार के स्वरूप को परिवर्तित किया है। पारंपरिक भ्रष्टाचार में कुछ कमी आई है, लेकिन बड़े घोटालों की संख्या बढ़ी है। तकनीक भ्रष्टाचार नियंत्रण के लिए प्रभावी साधन बन गई है। कमजोर संस्थाएँ भ्रष्टाचार को प्रोत्साहित करती हैं।

अतः इस शोध अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार के बीच का संबंध अत्यंत जटिल और बहुआयामी है। भारत जैसे विकासशील देशों में, वैश्वीकरण ने आर्थिक विकास, औद्योगीकरण और तकनीकी उन्नति के नए अवसर प्रदान किए हैं, जबकि इसके परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार के स्वरूप और स्तर में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है।[6] अध्ययन यह दर्शाता है कि वैश्वीकरण को न केवल भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने वाली प्रक्रिया कहा जा सकता है, न ही इसे पूर्णतः भ्रष्टाचार-निरोधक समझा जा सकता है।

भारत में 1991 के बाद की वैश्वीकरण-आधारित आर्थिक नीतियों ने प्रशासनिक नियंत्रण में कमी और बाजार शक्तियों को अधिक स्वतंत्रता दी है। इसके फलस्वरूप पारंपरिक लाइसेंस-आधारित भ्रष्टाचार में कमी आई, लेकिन इसके स्थान पर नीति-स्तरीय भ्रष्टाचार, कॉर्पोरेट घोटाले और राजनीतिक गठजोड़ जैसे नए और

जटिल रूपों का उदय हुआ है। यह दर्शाता है कि भ्रष्टाचार समाप्त नहीं हुआ, बल्कि उसने अपना स्वरूप बदल लिया है।

अध्ययन के उद्देश्य

वैश्वीकरण की अवधारणा तथा उसके आर्थिक, राजनीतिक एवं प्रशासनिक आयामों का विश्लेषण करना।

भारत में भ्रष्टाचार की प्रकृति, स्वरूप और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।

वैश्वीकरण और भ्रष्टाचार के बीच अंतर्संबंधों को स्पष्ट करना।

उदारीकरण, निजीकरण और विदेशी पूँजी के प्रभाव में भ्रष्टाचार के बदलते रूपों का विश्लेषण करना।

सुझाव (Suggestions)

पारदर्शी नीति बनाना

मजबूत नियामक संस्थाओं का निर्माण

नैतिक कॉर्पोरेट संस्कृति को प्रोत्साहित करना

नागरिकों की जागरूकता बढ़ाना

शिक्षा में नैतिक मूल्यों पर जोर देना

निष्कर्ष (Conclusion)

अध्ययन में यह भी निष्कर्ष निकाला गया है कि वैश्वीकरण के साथ आई तकनीकी क्रांति–जैसे डिजिटलीकरण और ई-गवर्नेंस–ने शासन में पारदर्शिता और जिम्मेदारी को बढ़ावा दिया है, जिससे छोटे भ्रष्टाचार पर प्रभावी नियंत्रण हुआ है। यह वैश्वीकरण का एक सकारात्मक पहलू है, जो दिखाता है कि उचित नीतिगत ढांचा होने पर वैश्वीकरण भ्रष्टाचार के नियंत्रण का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

अतिरिक्त रूप से, वैश्वीकरण ने भारत में नागरिक समाज, मीडिया और अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं की भूमिका को भी मजबूत किया है। अंतरराष्ट्रीय रैंकिंग और पारदर्शिता सूचकांक के कारण सरकारों पर सुशासन को अपनाने का दबाव बढ़ा है। हालांकि, कमजोर संस्थागत ढांचा, राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी, और आर्थिक असमानता जैसी चुनौतियाँ भ्रष्टाचार को समाप्त करने में बाधक बनी हुई हैं।

यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि भ्रष्टाचार का मुख्य कारण वैश्वीकरण नहीं, बल्कि इसका दोषपूर्ण कार्यान्वयन, अपर्याप्त नियम और कमजोर संस्थागत व्यवस्था है। यदि वैश्वीकरण को मजबूत लोकतांत्रिक संस्थाओं, स्वतंत्र न्यायपालिका और पारदर्शी प्रशासन के साथ जोड़ा जाये, तो यह भारत में सतत विकास और भ्रष्टाचार के उन्मूलन का प्रभावी साधन बन सकता है।

अतः आवश्यक है कि भारत वैश्वीकरण को केवल आर्थिक लाभ का साधन मानने के बजाय, इसे मूल्य-आधारित शासन, सामाजिक न्याय और समावेशी विकास के साथ संतुलित करे। तभी वैश्वीकरण भारत को आर्थिक रूप से समर्थ ही नहीं, बल्कि एक पारदर्शी, जवाबदेह और भ्रष्टाचार-मुक्त समाज की ओर भी अग्रसर करेगा।

संदर्भ सूची (References)

भारत सरकार - आर्थिक सर्वेक्षण

प्रभात पटनायक - भारतीय अर्थव्यवस्था और सुधार

विश्व बैंक - Governance Reports

समकालीन भारतीय अर्थव्यवस्था (हिंदी ग्रंथ)

भारतीय राजनीति एवं प्रशासन पर शोध लेख

सुशील कुमार - वैश्वीकरण और भारतीय समाज

'आग और पानी' के आलोक में तत्कालीन बनारस का आलोचनात्मक परिदृश्य

मनीष कुमार साव*

शोध सारांश –

बनारस को केंद्र में रखकर कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण आदि सभी विधाओं में रचनाएं लिखी गई है परंतु अभी तक ऐसी कोई रचना हमे नहीं दिखती की उसमे पूरा का पूरा बनारस समा जाएं। बनारस अपने आप में दीर्घ भी है और लघु भी। स्थूल भी है और सूक्ष्म भी। जहां जीवन भी है और मृत्यु भी। सृजन भी है और विनाश भी। ऐसे अनेकों नाम दिए जा सकते है , परन्तु बनारस को नाप पाना कठिन है। फिर भी रचनाकार अपने हिस्से के बनारस को हमेशा जीते है और कागजों पर उकेरते है। ऐसा ही एक प्रयास समकालीन कवि, आलोचक, अनुवादक और रंगनिर्देशक व्योमेश शुक्ल ने किया हैं। जो स्वयं बनारस की धरती से सृजित एक फूल है।

बीज शब्द – बनारस

ग़ालिब का एक शेर है – "बुलंद उफ़ताद: तमकीन - ए – बनारस
बुवद बर औज -ए- ऊ अंदेश: नारस"

(बनारस का रुतबा इतना बुलंद है कि वहां तक किसी मनुष्य की कल्पना भी नहीं पहुंच सकती)

व्योमेश शुक्ल ने 'आग और पानी' शीर्षक से बनारस पर एकाग्र गद्य लिखा हैं। इस पुस्तक के सहारे उन्होंने अपने हिस्से के बनारस से हम सभी को रु-बरु करवाया है। बनारस को आग और पानी का मुक़ाबला बताया है। जैसा हम सभी जानते है कि आग और पानी होने का मतलब यह एक असंभव कार्य होता है। फिर भी लेखक उस असंभव कार्य को करने का प्रयास करते हुए कहते हैं कि - "बनारस असंभव जगह है। उसकी नाप मुश्किल है।इस पार भी है, उस पार भी। राख में है और बालू में भी है। खड़ा है और भाग रहा है। नींद में है और जाग रहा है । आग और पानी का मुक़ाबला है बनारस। शोर के साथ संगीत की जुगलबंदी है। मंत्र और गालियों में होड़ है। प्यार की सबसे कोमल कहानी का नायक पहलवान है। निर्गुण के गुण राम हैं और सगुण मस्जिद में सोया है।"[1]

बनारस गंगा की गोद में बसा दुनिया में अनोखा शहर हैं। जहां जीवन और मृत्यु एक साथ स्थान पाते है। बनारस प्राचीन काल से लेकर आज तक अपनी संस्कृति, परंपरा और वैचारिक बहुलता के लिए आज भी रोचक बना हुआ है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक बनारस ने साहित्य के सभी वैचारिक परिवर्तनों को अपनी आंखों के सामने गुजरते हुए देखा है। नेहरू को बनारस से बेहद लगाव था। वे बनारस के ऐतिहासिक महत्व को तीन हज़ार वर्ष पूर्व से लेकर आज तक देखते है। वे कहते हैं कि - "वाराणसी पूर्व दिशा की शाश्वत नगरी है, न केवल भारत के लिए किंतु पूर्वी एशिया के लिए भी।"[2] इस बनारस को शाश्वत नगरी बनाने का श्रेय वहां की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक जनता को ही जाता है। जिन्होंने अपनी परंपरा को सदैव अपने साथ रखा।

अगर किसी को बनारस के बारे में समझना और जानना है तो उसे गंगा और गोस्वामी तुलसीदास की जानकारी होना अनिवार्य हैं। उनके अभाव में बनारस को समझने और जानने की यात्रा अधूरी मानी जाएगी। नदी हमारी सभ्यता का एक हिस्सा हैं। उसे ईश्वर के समतुल्य मानकर उसकी आराधना भी की जाती है और उसका सेवन भी। लेखक ने अपने जीवनानुभव के माध्यम से दैनिक जीवन में गंगा की महत्ता और वैज्ञानिकता को उजागर करते हुए कहते है कि- " मेरी मां मुझे तैरना सीखने के लिए गंगातट पर ले जाती थीं। एक दिन वह बर्तन- भर गंगाजल लेकर घर आयीं और उसमें से कुछ बूंदें नींबू के अचार के मर्तबान में छिड़कने लगीं। पूछने पर बताया कि ऐसा करने से अचार ख़राब नहीं होगा। माँ पर भरोसा था, सो गंगाजी की जैविक ताक़त पर भी यक़ीन हो गया।"[3]

* हिंदी प्रवक्ता, पीएम श्री स्कूल जवाहर नवोदय विद्यालय मलकानगिरि, ओडिशा
Email: manishkumarshaw16396@gmail.com, 9091433076

नदी किनारे अनेकों सभ्यताएं विकसित हुई है। गंगा के निकट स्थित बनारस भी एक विकसित संस्कृति और सभ्यता का ही प्रतीक है। भारतवासियों के लिए गंगा सिर्फ एक नदी ही नहीं है बल्कि आस्था का भी प्रतीक हैं। शायद यही कारण है कि गोस्वामी तुलसीदास कहते है कि - "दरस परस मज्जन अरु पाना, हरहि पाप कह वेद पुराना।"[4]

बनारस के घाट पर ही तुलसी का निवास था। जब लोगों ने उन्हें त्याग दिया तब तुलसी को शहर के दक्षिण में अस्सी घाट के करीब आसरा मिला और वही उन्होंने रामचरितमानस का सृजन लोक की भाषा में किया। तुलसी ने राम को जिस रूप में सृजित किया उसी रूप में राम आज के जनमानस में विराजमान हैं। बनारस और गंगा के साथ तुलसीदास का काफी गहरा संबंध हैं। यह संबंध कबीर और रैदास जैसे क्रांतिकारी लेखकों में देखने को नहीं मिलता है। लेखक ने बनारस, गंगा और तुलसीदास के बीच के संबंध को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि - "तुलसीदास के पास बनारस में लय होने की और यहां की गंगा को बिना डूबे पार कर लेने की समझ थी। वे इस सभ्यता के जल में चीनी की तरह घुल गए।"[5]

इस पुस्तक में 18वीं, 19वीं और 20वीं सदी के बनारस को राय आनंदकृष्ण जी के माध्यम से जानने का प्रयास किया गया हैं। राय आनंदकृष्ण जानेमाने इतिहासकार हैं। वे बनारस के मूर्धन्य कलावंत, संस्कृति-सेवी और अनूठे गद्यकार रायकृष्णदास के पुत्र भी हैं। यह अध्याय मूलतः इतिहासकार राय आनंदकृष्ण के साथ किए गए साक्षात्कार का परिणाम है। इसमें लेखक ने नवजागरण और बनारस से जुड़े सवालों पर प्रकाश डाला है, जैसे- नवजागरण में किन लोगों का योगदान था? उस समय की काशी कैसी थी? शिक्षा के क्षेत्र में किनका योगदान था? ऐनी बेसेंट के कौन कौन से अंतर्विरोध थे? राय कृष्णदास के साथ प्रसाद और प्रेमचंद के संबंध कैसे थे? नवजागरण में बनारस के किन समाज का योगदान रहा? आधुनिकता निर्णयक रूप में कब और कहाँ से आई? और भी बहुत सी बातें जो कही दर्ज न हुई होंगी, उन सभी की पड़ताल इस अध्याय में राय आनंदकृष्ण के माध्यम से किया गया हैं।

व्योमेश शुक्ल ने बनारस के कलाविदों को केंद्र में रखकर उनके कला, जीवन और संघर्ष को अभिव्यक्त किया है। उस्ताद बिस्मिल्लाह ख़ाँ ने शहनाई के माध्यम से शास्त्रीय संगीत में जिस काल्पनिक रेखा को खींचा, उसे आज तक कोई पार नहीं कर सका है। शास्त्रीय संगीत की दूसरी विधाओं की तरह शहनाई का कोई घराना या संस्थान नहीं है। परंतु बिस्मिल्ला ख़ाँ ने ऐसी शहनाई बजाई की आज तक कोई भी उनके खालीपन को पूरा नही कर सका है। उनके शागिर्दों और बेटों ने काफी शहनाई बजाई मगर उनके सानी का कोई नहीं हुआ।

बनारस में कलाकारों और कलाप्रेमियों की संख्या में कोई कमी नहीं है। बनारस के महत्वपूर्ण तबला वादक किशन महाराज का कोई तोड़ नहीं हैं। वे एक लोक शिक्षक थे। उन्होंने सामर्थ्यवान तबलवादकों की कई पीढियां तैयार कीं। उदाहरण स्वरूप देखे तो कुमारबोस और संदीप दास जैसे अनेकों कलाकार सामने आते हैं। किशन महाराज के बारे में लेखक कहते है कि:- "दरअसल किशन महाराज जैसे लोगों को पहचानने के लिए सभ्यता को समझने की एक महत्वकांक्षी बौद्धिक परियोजना दरकार है। इतनी लीला करने वाले व्यक्ति को ऊपर से और आसानी से नहीं जाना जा सकता।"[6]

ऐसे एक से बड़े एक कलाकारों की भरमार बनारस में रही है। जब हम किशन महाराज की बात करते है तो हमें तबलावादक पद्मभूषण पंडित सामता प्रसाद उर्फ़ गुदई महाराज को नहीं भूलना चाहिए। भले ही उनका जन्म एक गरीब परिवार में हुआ परन्तु अपनी प्रतिभा से उन्होंने इस कमी को दूर तो किया परंतु अपनी साधारणता को कभी अपने से दूर नहीं होने दिया। लेखक अपने स्कूल के दिनों से उन्हें देख कर आश्चर्य चकित होते रहे है। लेखक कहते हैं कि - " वह(गुदई महाराज) आगे के रिक्शे पर बैठे, हाथ में लैक्टोजन पाउडर का डब्बा लिए, लुंगी-कुर्ते में कहीं जा रहे होते। मुझे विश्वास ही नहीं होता था कि यही पंडित सामता प्रसाद मिश्र उर्फ़ गुदई महाराज हैं।"[7]

व्योमेश शुक्ल ने तीन महत्वपूर्ण कलाविदों का साक्षात्कार भी लिया है। पंडित छन्नूलाल मिश्र गायकी के लिए लोकप्रिय थे तो पंडित लच्छू महाराज और पंडित कुमार बोस तबला के लिए प्रसिद्ध थें। पंडित कुमार बोस तो किशन महाराज की शिष्य परंपरा में आते हैं। इन सभी में बनारस ऐसे बसा है कि अगर इनसे यह बोला जाएं कि प्राण छोड़ो या बनारस तो वे हंसते-हंसते प्राणों को त्यागना ज्यादा सहज महसूस करते। व्योमेश ने जब पंडित छन्नूलाल से यह पूछा कि

आपका बनासर शहर से कैसे रिश्ता हैं? तो उन्होंने बताया कि - "हमारी इच्छा यही है कि हम बनारस छोड़कर कहीं न जाएं। यहीं मरना है, ताकि गंगाजी मिलें।"[8] इतना अगाध प्रेम किसी बनारसी का ही बनारस के लिए देखने को मिल सकता है।

बनारस सिर्फ व्योमेश शुक्ल तक ही सीमित नहीं रही है। बनारस को चाहने वालो की एक लंबी परंपरा रही है। अष्टभुजा शुक्ल भी उन्हीं प्रेमियों में से जा जिन्होंने बनारस को आत्मसात किया है। बनारस की सभ्यता और संस्कार पर लिखते हैं कि -

“सभ्यता का जल यहीं से जाता है
सभ्यता की राख यहीं से आती है
लेकिन यहाँ से सभ्यता की कोई हवा नहीं बहती
न ही यहाँ सभ्यता की कोई हवा आती है
यह बनारस है
चाहे सारनाथ की ओर से आओ या लहरतारा की ओर से
वरुणा की ओर आओ या गंगा की ओर से
इलाहाबाद की ओर से आओ या मुगलसराय की ओर से
डमरूवाले की सौगन्ध
यह बनारस यही और इसी तरह मिलेगा।"[9]

जहां एक ओर व्योमेश शुक्ल और अष्टभुजा शुक्ल **बनारस की संस्कृति** और सभ्यता का गुणगान करते है वहीं दूसरी ओर श्रीकांत वर्मा बनारस के कटु सत्य से भी अवगत करवाते है। श्रीकांत वर्मा मणिकर्णिका घाट का जिक्र अपनी कविता में करते है। वे जीवन के कटु सत्य से अवगत करवाते हुए कहते है कि कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो लोगों को मणिकर्णिका घाट में समा जाने से रोक दे। अपनी कविता ‘मणिकर्णिका के नीचे मणिकर्णिका मिलेगी’ में लिखते हैं कि -

“ क्या कराह रहे हो?
कोई उपचार तुम्हें मणिकर्णिका से
नहीं, बचा सकता ।
क्यों भूलने की कोशिश कर रहे हो?
कोई भी विस्मृति
यथार्थ पर पर्दा नहीं डाल सकती ।
खोद रहे हो मणिकर्णिका? क्यों
चिल्ला रहे हो ।”[10]

ज्ञानेन्द्रपति ने बनारस के घाट का चित्र अपनी कविता में उकेरा है। वे जीवन के दुख-सुख, पीड़ा, त्रासदी को शांत होते हुए देखते है। वे कविता के माध्यम से मणिकर्णिका घाट की स्थिति को व्यक्त करते हुए लिखते हैं -

“सुलगा हुआ मैं घर से निकला
बाहर हवाएँ भी तेज
जलता हआ पहुँचा
और जितनी देर में एक चिता जलती है।
मणिकार्णिका के पास बैठा रहा
उसके तमतमाते ललाट के सिरहाने
और बुझ कर उठ आया
औट आया प्रशान्त ।"[11]

व्योमेश शुक्ल ने भारतेंदु और बनारस के संबंध को दिखाया गया है। व्योमेश ने बनारस को 'साहित्य का पानीपत' माना है। इसमे संकटमोचन संगीत समारोह के बारे में भी बताया गया है जहां कलाकार समारोह और रियाज

दोनों किया करते थे। संकटमोचन के बारे में लेखक कहते हैं कि - "पूरे संकटमोचन संगीत समारोह में कोई वीआईपी नहीं । सब श्रोता । संगीत और साधारणता का दबदबा।"[12]

व्योमेश ने कबीर, प्रेमचंद और नागरी प्रचारिणी का वर्णन भी किया हैं। इन्होंने कबीरपंथी साधुओं ने जो किस्सा सुनाया है उसका भी संकलन किया गया है। लेखक ने प्रेमचंद के मुहल्ले और घर के सामने स्थित 'रामकटोरा' नाम के पोखर का भी जिक्र किया है। लेखन नागरी प्रचारिणी सभा से लंबे समय से जुड़े हुए है। सभा की स्थिति को देखकर उन्हें काफी दुःख होता है। प्रेमचंद की एक कहानी 'पंच परमेश्वर' के शिर्षक के संबंध में एक फटा-चिथरा मिला। लेखक कहते है कि - "एक फटा-चिथड़ा कागज मैंने भी देखा था। वह प्रेमचन्द की कहानी 'पंच परमेश्वर' की पांडुलिपि का टुकड़ा था। पंद्रह साल पहले, वह काग़ज़ 'सभा' के पुस्तकालय की फ़र्श पर पड़ा हुआ था। उस पर बतौर शीर्षक लिखा था 'पंच भगवान' और भगवान को काटकर परमेश्वर कर दिया गया था। मैंने कागज वहीं जमा कर दिया। बूढ़े लाइब्रेरियन ने बताया कि यह कहानी 'सरस्वती' में छपी थी। प्रेमचन्द ने शीर्षक रखा था 'पंच भगवान'। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भगवान को परमेश्वर कर दिया।"[13]

इस तरह के ढेरों तथ्य नागरी प्रचारिणी सभा में संरक्षित हैं, परंतु संसाधनों के अभाव में सारी प्रतियां धूल खा रही है। हाल ही में व्योमेश शुक्ल नागरी प्रचारिणी सभा के प्रधानमंत्री नियुक्त हुए है हो हमे यह पूर्ण विश्वास है कि व्योमेश शुक्ल जैसे साहित्य और कला प्रेमी उसके उत्थान में कार्य करेंगे।

निष्कर्ष - समग्रता में देखे बनारस की कला, साहित्य, सांस्कृति और समाज पर बड़ी गम्भीरता से अध्ययन हुआ हैं। बनारस पर लिखी गई रचनाएं कही भी बोझिल और उबाऊ नहीं लगती हैं, बल्कि गंगा की तरह तरल, लयपूर्ण और प्रवाहमान हैं। बनारस के लिए जगह - जगह पर मुहावरों और लोकोक्तियों का भरपूर प्रयोग देखने को मिलता है। व्यक्तियों के जीवन पर अनेकों जीवनी लिखी गई है। मगर बनारस शहर को परखने और समझने के लिए उससे अधिक लिखा और पढ़ा गया हैं। बनारस अपने गुणों के साथ एक सशक्त व्यक्तित्व के रूप में उभर कर सामने आता है। व्योमेश शुक्ल बनारस की पहचान के बारे में कहते हैं कि - "बनारस की पहचान के सारे बिंब भटके हुए देवता हैं। वे अपने मंदिरों से बाहर निकलकर भक्तों की अंतहीन कतार में खड़े हैं। समय नाव में बैठा है और साधु का लंगोट आसमान में पतंग की तरह लहरा रहा है। सालभर राधे-राधे करने वाले पुष्टिमार्गी रामलीला में सीता और लक्ष्मण का श्रृंगार कर रहे हैं। नदी रेत में छिपी हुई है। मैकडॉनल्ड्स की स्मार्ट इमारत के सामने ठेठ कचौड़ी जलेबी का फ़िदायीन ठेला लगा हुआ है। सब अपने आप में एक-दूसरे से अलग-अलग भी बनारस हैं।"[14]

संदर्भ सूची –

शुक्ल, व्योमेश, आग और पानी, रुख़ प्रकाशन, चतुर्थ संस्करण, अगस्त : 2023, पृ. 12.
डॉ. मोतीचंद्र, काशी का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण : 2018, पृ. 14.
शुक्ल, व्योमेश, आग और पानी, रुख़ प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण, अगस्त : 2023, पृ. 18.
वही, पृ. 20.
वही, पृ. 23.
वही,पृ. 61.
वही,पृ. 63.
वही,पृ. 65.
शुक्ल, अष्टभुजा, यह बनारस है, कल्पना पत्रिका, काशी अंक, पृ. 257.
वर्मा, श्रीकांत, मणिकर्णिका के नीचे मणिकर्णिका मिलेगी, **कल्पना पत्रिका, काशी अंक, पृ. 143.**
ज्ञानेन्द्रपति, मणिकर्णिका(कविता), राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 20.
शुक्ल, व्योमेश, आग और पानी, रुख़ प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण, अगस्त : 2023, पृ. 113.
वही, पृ. 120.
वही,पृ. 13.

‘आज बाजार बंद है’ : हाशिए की अस्मिता और शोषणकारी तंत्र का अध्ययन

संजय साव*

शोध सारांश –

इस अध्ययन में ‘आज बाज़ार बंद है’ उपन्यास को केंद्र में रखकर हाशिए की स्त्रियों के जीवन और उनके चारों ओर सक्रिय शोषणकारी तंत्र का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है। यह उपन्यास उन सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था को उजागर करता है, जो वेश्याओं के जीवन को नियंत्रित और प्रभावित करती हैं। इस अध्ययन के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि उपन्यास में स्त्री-अस्मिता, सामाजिक उपेक्षा, आर्थिक विवशता और व्यवस्था की क्रूरता किस प्रकार अभिव्यक्त हुई है, तथा इन परिस्थितियों के बीच उन उपेक्षित स्त्रियों में प्रतिरोध और आत्मबोध की चेतना किस हद तक विकसित होती है। उपन्यास के कथानक, पात्रों और परिवेश के माध्यम से हाशिए के जीवन की यथार्थपरक तस्वीर उभरकर सामने आती है, जो न केवल समाज की विसंगतियों को रेखांकित करती है, बल्कि परिवर्तन की संभावनाओं की ओर भी संकेत करती है।

बीज शब्द - स्त्री-अस्मिता, सामाजिक उपेक्षा, दलित साहित्य, देह-व्यपार, समाजशास्त्रीय अध्ययन, सामाजिक व्यवस्था।

“ ये दुनिया दो-रंगी है
एक तरफ़ से रेशम ओढ़े एक तरफ़ से नंगी है
एक तरफ़ अंधी दौलत की पागल ऐश-परस्ती
एक तरफ़ जिस्मों की क़ीमत रोटी से भी सस्ती
एक तरफ़ है सोनागाची एक तरफ़ चौरंगी है
ये दुनिया दो रंगी है ”[1]

साहिर लुधियानवी

जब भी समाज के उस उपेक्षित वर्ग की ओर दृष्टि जाति है जो सदियों से अंधेरी तंग गलियों में जीवन जीने के लिए अभिशप्त है, तब-तब मेरे ज़हन साहिर ही ये पंक्तियाँ कौंध उठती हैं। साहिर साहब की ये पंक्तियाँ साहित्य के कैनवास पर समाज के उस काले यथार्थ का चित्र गढ़ती हैं, जिसपर हमारा समाज बात करने से भी कतराता है। जो मनुष्य होकर भी सामाजिक परिधि में सामाजिक नहीं हो पाती हैं। जिन्हें इस लोकतान्त्रिक देश में अपने अनुरूप सरकार चुनने का अधिकार तो मिला, परंतु अपने अनुरूप प्रेमी या पति चुनने का अधिकार समाज उन्हें नहीं देता। निराला कृत ‘अप्सरा’ में कनक की माँ सर्वेश्वरी देवी का यह कथन देखिए – “किसी को प्यार मत करना। हमारे लिये प्यार करना आत्मा की कमजोरी है। यह हमारा धर्म नहीं।....संसार के और लोग भीतर से प्यार करते हैं, हम लोग बाहर से ।”[2] यह वेदना इस समाज से मिली पीड़ा की ही उपज है। यह समाज का दोहरापन ही है जहाँ एक तरफ समृद्ध वर्ग रेशमी आडंबर और ऐश्वर्य में लिपटा हुआ है, धन के नशे में चूर अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए सब कुछ खर्च कर सकता है, जबकि दूसरी ओर एक ऐसा वर्ग है जो अभाव और विवशता के कारण नग्न यथार्थ से जूझ रहा है। इसी वर्ग को केंद्र में रख कर इस अध्ययन के माध्यम से भारतीय समाज के उस पृष्ठ को खोलने का प्रयास किया जाएगा, जिसमें अंधेरी तंग गलियों में रोती-बिलखती उन स्त्रियों और उनकी सम्मान, कला और गरिमा से जुड़ी पहचान का धीरे-धीरे पतन और वस्तुकरण में बदल जाने की ऐतिहासिक यात्रा का मार्मिक चित्र प्रस्तुत करता है।

* शोधार्थी, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU), मानविकी विद्यापीठ, हिन्दी विभाग, नई दिल्ली – 110068
shawsanjay16396@gmail.com, 8670373104

भारतीय समाज में वेश्यावृत्ति की जड़ें कितनी पुरानी हैं, इसका सटीक निर्धारण करना कठिन है, किंतु इतना निश्चित है कि यह परम्परा अत्यंत प्राचीन काल से चली आ रही है। समय के साथ इसका स्वरूप बदलता गया, पर इसकी उपस्थिति समाज के विभिन्न रूपों में निरंतर बनी रही। आज जिसे 'सेक्स वर्कर (Sex Worker)' कहा जाता है कुछ समय पूर्व तक इनके लिए 'वेश्या' शब्द का चलन समाज में बहुत तेजी से था और आज भी समाज में उन्हें इसी अपमानजनक शब्द से संबोधित किया जाता है। प्राचीन भारत में वही स्त्रियाँ 'गणिका' या 'नगरवधु' के रूप में जानी जाती थीं, जो नृत्य, संगीत आदि कलाओं में निपुण, राजा -महाराजों के दारबार का अलंकार हुआ करती थीं, जहाँ सामान्य जन भी उनके समीप नहीं पहुँच सकता था। जिन्हें केवल देह रूप में ही नहीं बल्कि 'कला साम्राज्ञी' के रूप में जाना जाता था। परंतु, समय की प्रवाह ने इन्हें इस सम्मान से वंचित कर केवल देह की सीमा तक सीमित कर दिया है। वे धीरे-धीरे वस्तु की तरह आंकी जाने लगीं और अंततः 'मात्र वेश्याएँ' बनकर रह गईं ।

यह सर्व प्रचलित धारणा है कि 'साहित्य समाज का दर्पण है।' जिसमें समय के सामाजिक यथार्थ का स्पष्ट प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है। इसी परिप्रेक्ष्य में यदि वेश्यावृत्ति की तलाश की जाए तो हम पाते हैं कि साहित्य में वेश्याओं या गणिकाओं का स्पष्ट उल्लेख सबसे प्रभावशाली रूप में 'मृच्छकटिकम्' में मिलता है, जिसमें उज्जयिनी की प्रसिद्ध गणिका 'वसंतसेना' का उल्लेख है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यह केवल आधुनिक युग की समस्या नहीं है, बल्कि यह समस्या प्राचीन समाज में भी विद्यमान रही है। अतः शूद्रक कृत 'मृच्छकटिकम्' (रांगेय राघव इसका समय 'ईस्वी पहली शती या दूसरी शती मानते हैं।) इस परम्परा के ऐतिहासिक अस्तित्व का साहित्यिक दस्तावेज है। इस प्रकार, वेश्यावृत्ति को केवल वर्तमान सामाजिक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि एक दीर्घकालीन सामाजिक परिघटना के रूप में समझना अधिक उचित होगा, जिसकी जड़ें भारतीय इतिहास और संस्कृति में गहराई तक समाई हुई हैं।

हिन्दी साहित्य में वेश्याओं के जीवन पर विस्तार से लिखा गया है। हिंदी के अनेक रचनाकारों ने वेश्या जीवन की पीड़ा, विवशता और मानवीय संघर्ष को अपने रचनाओं में बहुत ही संवेदनशीलता के साथ उकेरा हैं। जिनमें किशोरीलाल गोस्वामी, गिरिजानंद तिवारी, लज्जाराम मेहता, चन्द्रशेखर पाठक, प्रेमचंद, पांडेबेचन शर्मा 'उग्र', सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', भगवती प्रसाद वाजपेयी, जगदम्बा प्रसाद दीक्षित आदि के नाम लिये जाते हैं। इसी परंपरा में मोहनदास नैमिशराय का नाम भी उल्लेखनीय है। वैसे तो मोहनदास नैमिशराय का नाम हिन्दी साहित्य में किसी परिचय का मोहताज नहीं है, फिर भी संक्षेप में बस इतना ही कहा जाए तो काफी है कि मोहनदास नैमिशराय हिन्दी साहित्य के दलित साहित्यिक धारा के प्रमुख हस्ताक्षरों में से एक हैं। जिनकी लेखनी ने इस साहित्यिक धारा को पल्लवित और पोषित किया है ।

इस अध्ययन में मूलतः समजशास्त्रीय शोध विधि का सहारा लेते हुए, मोहनदास नैमिशराय के प्रसिद्ध उपन्यास 'आज बाजार बंद है' के परिप्रेक्ष्य में दो महत्वपूर्ण प्रश्नों की गहराई से पड़ताल की जाएगी। जिनमें – पहला, समकालीन भारतीय समाज में हाशिए पर स्थित स्त्रियों के जीवन को प्रभावित करने वाले सामाजिक और धार्मिक तंत्र किस प्रकार उनके शोषण और अस्मिता पर प्रभाव डालते हैं, और यह उपन्यास इसे किस हद तक यथार्थपरक रूप में प्रस्तुत करता है?" और दूसरा, क्या उपन्यास में हाशिए की स्त्रियाँ केवल पीड़ित हैं, या उनमें प्रतिरोध और अस्मिताबोध की चेतना भी दिखाई देती है?

यह बात नकारी नहीं जा सकती हैं कि 21 वीं शताब्दी के इस वैज्ञानिक दौर में हमारा समाज पूरी तरह से सामाजिक कुरीतियों और रूढ़िवादी परंपराओं से मुक्त है। धार्मिक ढोंग, पाखंड और अंधविश्वास की बेड़ियों से आज भी हमारा समाज जकड़ा हुआ है। इस सम्बंध में समाज सेविका डॉ. म्युथ्थुलक्ष्मी रेड्डी का यह कथन उचित ही जान पड़ता है - "इस भाग्यशाली देश में हर एक सामाजिक कुप्रथा धर्म के नाम पर प्रचारित रहती है।"[3] इस कथन के आलोक में यदि इस अध्ययन के पहले प्रश्न पर विचार किया जाए तो यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि - देवदासी प्रथा, जिसकी शुरुआत मूलतः मंदिरों में नृत्य और संगीत के जरिए ईश्वर की भक्ति और सेवा के उद्देश्य से हुई थी। कालांतर में धर्म की आड़ में स्त्री शोषण को प्रश्रय देने लगी। धर्म के नाम पर पोषित इस परंपरा के अतीत के पन्ने पलटे तो यह ज्ञात होगा कि न जाने कितनी महिलाओं को इस धार्मिक कुप्रथा का शिकार होना पड़ा है। वास्तव में इन जैसी धार्मिक कुप्रथाओं ने स्त्री-शोषण के

अलौकिक रूप की शुरुआत की है और मंदिरों में स्त्री शोषण की उस परंपरा को विकसित किया जिसे देवदासी प्रथा कहा गया। धर्म की ओट में नारी उत्पीड़न की यह प्रथा भारत की सबसे घृणित प्रथा है, जिसने भारत में वेश्यावृत्ति को बढ़ावा दिया है। जो वेश्यावृति के ऐतिहासिक विकास क्रम का एक हिस्सा रहा है, जिसे धार्मिक स्वीकृति प्राप्त थी। बीबन किडरॉन (**Beeban Kidron) 'The Guardian'** में प्रकाशित अपने **'Devadasis are a cursed community' (देवदासियाँ एक अभिशप्त समुदाय हैं)** नामक आलेख में लिखती हैं कि - " BL Patil, the founder of Vimochana, an organisation working towards the eradication of the devadasi system, says that although the dedication ceremonies are banned, the practice is still prevalent, as families and priests conduct them in secret. The National Commission for Women estimate that there are 48,358 Devadasis currently in India."[4] (बी. एल. पाटिल, जो 'विमोचना' नामक संगठन के संस्थापक हैं और देवदासी प्रथा के उन्मूलन की दिशा में कार्यरत हैं, कहते हैं कि यद्यपि समर्पण से जुड़े अनुष्ठानों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है, फिर भी यह प्रथा आज भी जारी है, क्योंकि परिवार और पुजारी इन्हें गुप्त रूप से सम्पन्न कराते हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग के अनुसार, वर्तमान में भारत में लगभग 48,358 देवदासियाँ मौजूद हैं।) इसी आलेख में एक पार्वतीम्मा नामक देवदासी की स्थिति को उसी के शब्दों में वया करती हैं - "We are a cursed community. Men use us and throw us away," she says."[5] ('वह कहती है, "हम एक अभिशप्त समुदाय हैं। पुरुष हमारा उपयोग करते हैं और फिर हमें छोड़ देते हैं।')

'आज बाज़ार बंद है' उपन्यास भारत में स्त्री-शोषण के इस त्रासद अतीत का चित्रण करता है जिसमें दलित नारियों के देवदासी से लेकर वेश्या बनने तक की मार्मिक कथा है। इस उपन्यास में लेखक ने नायिका पार्वती के माध्यम से धार्मिकता की आड़ में दलित स्त्रियों के शोषण भयानक दृश्य प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की नायिका पार्वती भी उन तमाम स्त्रियों में से एक है जो इस धार्मिक कुप्रथा का शिकार है, जिसे बहुत छोटी उम्र में ही देवदासी बना दिया जाता है। पार्वती के मंदिर से चकले में आने अर्थात् देवदासी से वेश्या बनने तक के सफर को लेखक ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है - " बिना शिव की पार्वती, शिव ने पहले इसे मंदिर में बैठा कर देवदासी बनाया। फिर मंदिर से चकले में भेज दिया। पहले मंदिर के पुजारी ने इसके शरीर को भोगा। फिर गाँव के पटेल ने बाजी मारी। दोनों का मन भर गया तो गाँव के सामंत साहूकार की बारी आई यानी हमारे समाज में जिसका जितना मान सम्मान, उतना ही देवदासी को भोगने के लिए उनके अधिकार सुरक्षित होते हैं। अब रात में काले चोर के रूप में देवता आते हैं और इस देवी को भोगते हैं। "[6] इस उपन्यास में लेखक ने इन उपेक्षिताओं के जीवन यथार्थ को यथार्थपरक ढंग से अभिव्यक्त किया है।

देश की स्वतंत्रता के बाद राजनीति ने भारतीय समाज में चेतना जागृति का प्रयास किया एवं समाज के अंतिम जन को उसके अधिकारों से परिचित करवाने का काम किया है। परंतु कालांतर में राजनीति का स्वरूप में बदलाब दिखाई पड़ता है। उसमें सत्ता की प्राप्ति, आर्थिक हितों की पूर्ति और जनसरोकारों की अपेक्षा गौण होती जा रही है। 'आज बाज़ार बंद है' उपन्यास में मोहनदास नैमिशराय जी ने भ्रष्ट प्रशासनिक व्यवस्था और सामाजिक तंत्र का चित्रण करते हुए वेश्याओं के जीवन में मौजूद त्रासदी और शारीरिक उत्पीड़न की समस्याओं को उजागर किया है। उपन्यास में दिखाया गया है कि समाज में कई बार वेश्याओं का शोषण राजनीतिक और प्रशासनिक पदाधिकारियों द्वारा किया जाता है, जो कभी-कभी लाभ, पदोन्नति या अन्य सुविधाओं के लिए उनका दुरुपयोग करते हैं। इसके साथ ही, कई बार उन्हें उनका उचित मेहनताना भी नहीं दिया जाता, जिससे उनका दोहरा शोषण होता है। इन कठिन परिस्थितियों के बावजूद, उपन्यास में वेश्याएं धैर्य और सहिष्णुता का परिचय देती हैं। नैमिशराय जी ने शबनम बाई नामक पात्र के माध्यम से इस भ्रष्ट तंत्र की वास्तविकता को पाठकों के सामने प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। शबनम बाई एक पत्रकार को इन्टरव्यू देती हुई कहती है- "किसी को ट्रान्सफर कराना हो या प्रोमोशन तब हमारी याद आती है। टेंडर पास कराना हो तो उन्हें हमारी जरूरत पड़ती है। सरकारी ऑफिसों में कभी कभी सीधे रिश्वत नहीं दी जाती है। हमें परोसा जाता है रिश्वत के रूप में। हमें बिछना ही पड़ता है। कोई कोई ऑफिसर तो हमें खुद ही बुलाते हैं। हमें जाना ही पड़ता है। हम नहीं जाएं तो सौदा नहीं पटता। सौदा पटाने के लिए हमारी जरूरत पड़ती है। हमारे शरीर पर शतरंज की बाजियां खेली जाती हैं और बड़े बड़े सौदे मंजूर हो जाते हैं। पहले हमारे शरीर पर दस्तखत किये जाते हैं फिर कागजों पर।"[7]

राष्ट्र की इन बेटियों को हमारा समाज मुख्यधारा में आने नहीं देता, उन्हें हाशिये पर ही रखता है। उन्हें हीन और घृणा की दृष्टि से देखता है। यह सच है कि वे जो काम करती हैं, वह अवांछनीय है, परन्तु एक विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या सभी वेश्याएँ अपनी मर्जी से इस दलदल में उतरती है? नहीं ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। सामाजिक मजबूरियाँ इन्हें यह काम करने पर मजबूर करती हैं। आज हमारा जो समाज इन्हें उपेक्षा का पात्र समझता है, उनकी इस दशा के पीछे उस समाज की भी भूमिका रही है। तो क्या सचमुच हमें उनसे घृणा करने का अधिकार है? इस तथ्य को उपन्यास सम्राट प्रेमचंद ने 'सेवासदन' में पद्मसिंह के माध्यम से उठाया है – "हमें उनसे घृणा करने का कोई अधिकार नहीं है। यह उनके साथ घोर अन्याय होगा। यह हमारी ही कुवासनाएं हमारे ही सामाजिक अत्याचार, हमारी ही कुप्रथाएं हैं, जिन्होंने वेश्याओं का रूप धारण किया है। यह दाललमंडी हमारे ही जीवन का कलुषित प्रतिबिंब, हमारे ही पैशाचिक अधर्म का साक्षात् स्वरूप है। किस मुँह से उनसे घृणा करे।"[8] राष्ट्र की ये बेटियाँ बिना माझी की एसी नाव है, जिनकी दशा लहरों के वेग पर टिकी है अर्थात, उन्हें सही दिशा देने वाला, सहारा देने वाला या सुरक्षा प्रदान करने वाला कोई नहीं है, जिसके कारण उनका भविष्य अनिश्चित है और वे जीवन की परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव में इधर-उधर बहने को मजबूर हैं।

इन उपेक्षिताओं के जीवन का आरंभ दर्द से होता है और अंत भी दर्द में ही होता है। शायद इसलिए कोई भी वेश्या अपने जीवन के मार्मिक क्षणों को याद रखना नहीं चाहती होगी। उदाहरणतः इस उपन्यास का अंतिम दृश्य देखिए जब लाठी चार्ज के दौरान शबनम बाई की मृत्यु होने वाली होती है और उसका अंतिम लफ़्ज़ होता है - "मुझे आग देना, दफनाना मत, जिससे सब कुछ जलकर खाक हो जाए, कुछ भी न बच जाए।"[9] शबनम बाई के ये लफ़्ज़ उसके सम्पूर्ण जीवन की वेदना को जाहिर करते हैं। वह अपने जीवन का कोई भी क्षण, कोई भी स्मृति समाज के लिए नहीं छोड़ना चाहती है। इन उपेक्षिताओं के जीवन की दर्दनाक दास्तान को यदि एक वाक्य में व्यक्त किया जाए तो उसे किशोरीलाल गोस्वामी कृत 'स्वर्गीय कुसुम या कुसुम कुमारी' की नायिका कुसुम कुमारी के शब्दों में कहा जा सकता है कि – "संसार में यदि सचमुच किसी का जीवन मरने से करोड़ों दर्ज बुरा होता है, तो वह वेश्याओं का है।"[10]

इस उपन्यास में स्त्री-मुक्ति एवं अस्मिताबोध की चेतना भी दिखाई देती है। ईमानदारी से यदि इतिहास को खंगाला जाए तो यह कहने में कोई आपत्ति नहीं है कि भारतीय समाज में स्त्रियाँ सदियों से शोषण का शिकार होती रही हैं और अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष करती रही हैं। पर यह पितृसत्तात्मक समाज उन्हें बार बार दबाता रहा है। उन्हें समाज में अपना स्थान बनाने के लिए सदैव संघर्ष करना पड़ा है। चाहे वह सीता हो, द्रौपदी हो या मीराँ हो। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री को सिर्फ एक वस्तु के रूप में देखा जाता रहा है। उन्हें शिक्षा, समानता और उनके अधिकारों से वंचित रखा गया है। इस देश के कई महापुरुषों ने स्त्रियों के अधिकार की लड़ाइयाँ लड़ी है, जिनमें कई स्त्रियों ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अपना योगदान दिया है। आज स्त्रियाँ अपने अधिकारों को जानने लगी हैं और अपने ऊपर हुए अन्याय और अत्याचार का विरोध कर रही हैं। आज हर जगह स्त्री मुक्ति के स्वर गूँज रहे हैं। चाहे वह समाज हो या साहित्य।

'आज बाज़ार बंद है' उपन्यास के माध्यम से मोहनदास नैमिशराय जी ने स्त्री मुक्ति के इस स्वर को वाणी दी है। जहाँ स्त्री अपनी अस्मिता, अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष करते हुए पितृसत्तात्मक समाज का विरोध करती है और अपने स्वाभिमान की लड़ाई लड़ती है। प्रस्तुत उपन्यास में उपन्यासकार ने शबनम बाई, पर्वती, मुमताज, हसीना, पूनम, फूल आदि पात्रों के माध्यम से स्त्री मुक्ति के स्वर को मुखरित किया है। उन्होंने इन उपेक्षिताओं को देह व्यापार से मुक्ति का संदेश देते हुए उनकी चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है और उनके अंतर्मन की छटपटाहट एवं अंधेरे शीलन भरे पिंजरे की कैद से मुक्ति की चाहत को चित्रित किया है। इस उपन्यास में शबनम बाई, पार्वती, फूल, मुमताज आदि देह-व्यापार के नरक से मुक्ति चाहती हैं, लेकिन यह विषमतावादी रूढ़िग्रस्त समाज उन्हें इस दलदल से बाहर आने नहीं देता। इस सम्बंध में लेखक लिखते हैं कि – "मानव समाज के बीच यह कैसा विरोधाभास रहा है कि जब भी किसी अच्छे कार्य की शुरुआत की जाती है, पग पग पर परेशानियां आती हैं, न सर्फ परेशानियां बल्कि खलनायकों से भी जूझना पड़ता है।"[11] इस उपन्यास में शबनम बाई से इस मुक्ति की शुरुआत होती है। देर से ही सही पर उनमें अपने अधिकारों के प्रति चेतना जागृत होती है। परंतु उन्हें अपने जागने की कीमत भी चुकानी पड़ती है। इस उपन्यास में जब शबनम बाई ने वेश्याओं का पक्ष लेकर वेश्यावृति बंद करने का बीड़ा उठाया, तो पुलिस और दलाल उनके मुक्ति मार्ग में बाधक बनने लगे। दलाल शबनम बाई को डराता, धमकाता है और वेश्यावृति के लिए बाध्य करता है, परंतु शबनम बाई

वेश्यावृति के इस दलदल में दोबारा नहीं धंसना चाहती है। वह दलाल को भी यह सब छोड़ने को कहती है – "कान खोलकर सुन लो मैं और मेरी ये बेटियां धंधा छोड़ चुकी हैं। मेरी सलाह मानो तो तुम भी इस धंधे से अब तौबा कर लो।"[12] शबनम बाई अपने जीवन के अंतिम क्षणों में भी उन्हें मुक्ति का संदेश देती है " याद रखो तुम सब को इस पेशे से मुक्त होना हैं। "[13]

इस उपन्यास के अंत में उपन्यासकार ने इन उपेक्षिताओं के उन्मूलन हेतु एक मार्ग प्रस्तुत किया है जिसमें यथार्थ की अपेक्षा आदर्श की प्रधानता अधिक दिखाई देती है। इसमें संदेह नहीं कि लेखक बाबा साहब अम्बेडकर द्वारा 1936 ई. में बम्बई के देवदास ठाक्कर हॉल में दिए गए ऐतिहासिक भाषण से प्रभावित होकर सुमीत और पार्वती का विवाह कराते हैं और इसके माध्यम से वेश्याओं के लिए एक सम्मानजनक जीवन की संभावना प्रस्तुत करते हैं। लेकिन ज़मीनी हकीकत यह है कि आज के समाज में ऐसे सुमीत बहुत कम मिलते हैं, जो पार्वती जैसी स्त्री को सहज रूप से अपनाने का साहस कर सकें। इसी प्रेरणा के आधार पर उन्होंने सुमीत और पार्वती का विवाह कराकर वेश्याओं को देह-व्यापार के दलदल से बाहर निकलने का एक संभावित मार्ग दिखाया है। किन्तु वर्तमान सामाजिक में ऐसे सुमीत बहुत कम हैं, जो पार्वती जैसी स्त्री को सामाजिक रूप से स्वीकार कर सकें।

निष्कर्ष – उपरोक्त अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि नैमिशराय कृत 'आज बाज़ार बंद है' उपन्यास केवल वेश्याओं के जीवन का वर्णन मात्र नहीं करता, बल्कि उनके अस्तित्व, संघर्ष और सामाजिक विडंबनाओं को व्यक्त करने वाला एक यथार्थवादी उपन्यास है, जो नारी उत्पीड़न विशेषकर दलित नारी उत्पीड़न के उस काले इतिहास को प्रस्तुत करता है जिसमें दलित नारियों के देवदासी से लेकर वेश्या बनने तक की मार्मिक कथा है। इस उपन्यास की महत्तवपूर्ण उपलब्धि यह है कि इसमें उपन्यासकार ने इन अभिशप्त नारियों के जीवन की मार्मिक स्थितियों, उनकी व्यथा कथा का सहानुभूति के स्तर पर केवल वर्णन ही नहीं किया है, बल्कि मंदिरों-मठों, राजनीति, पुलिसतंत्र आदि में व्याप्त भ्रष्टाचार और कुत्सित षड्यंत्रों एवं दमघोंटू स्थितियों का निर्भीक पोस्टमार्टम किया है। साथ ही साथ लेखक ने इसमें अम्बेडकरवादी जीवन दर्शन के तहत अंधेरी सीलनभारी गलियों में अभिशप्त जीवन जीने को विवश नारी चरित्रों में अस्मिताबोध जागकर उनमें अनंत संभावनाओं की तलाश की है। अतः यह उपन्यास ने केवल रचनाकर को हिंदी साहित्य में महत्तवपूर्ण स्थान दिलाता है, वरन् उनके उस गंभीर व्यक्तित्व को भी उजागर करती है, जिसमें गहरा सामाजिक सरोकार है, ठोस यथार्थ प्रस्तुत करने का साह है, विकृत सामाजिक व्यवस्थातंत्र पर बेबाक टिप्पणी करने की निर्भीकता है।

संदर्भ सूची :

लुधियानवी, साहिर, साहिर लुधियानवी के गीत, ये दुनिया दो-रंगी है, रेखता, https://www.rekhta.org/geet/ye-duniyaa-do-rangii-hai-sahir-ludhianvi-geet?lang=hi, 06/01/2026.

निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, अप्सरा, गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ, प्रथम संस्करण : 1931, पृ. 20.

वर्मा, श्री मुकुटबिहारी, स्त्री समस्या, सस्ता सहित्य मंडल, अजमेर, संस्करण 2000, पृ. 246.

Kidron, Beeban, Devadasis are a cursed community, The Guardian, https://www.theguardian.com/lifeandstyle/2011/jan/21/devadasi-india-sex-work-religion , 06/01/2026.

वही, **https://www.theguardian.com/lifeandstyle/2011/jan/21/devadasi-india-sex-work-religion**

नैमिशराय, मोहनदास, आज बाज़ार बंद है, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2006, पृ. 33.

वही, पृ. 38.

प्रेमचन्द, सेवासदन, संस्करण-2007, जनभारती प्रकाशन, पृ. 132.

नैमिशराय, मोहनदास, आज बाज़ार बंद है, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2006, पृ. 150.

तिवारी, डॉ. रामचन्द्र, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, बारहवां संस्करण : 2018, पृ.178.

नैमिशराय, मोहनदास, आज बाज़ार बंद है, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2006, पृ. 121.

वही, पृ. 121.

वही, पृ. 150.

हजारी प्रसाद द्विवेदी के लेखन में भाषा चिंतन

अश्वनी कुमार मिश्र*

शोध सार

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का भाषा-चिंतन उन्हें केवल एक साहित्यकार नहीं, बल्कि भाषा के एक महान समाजशास्त्री के रूप में प्रतिष्ठित करता है। प्रस्तुत शोध आलेख द्विवेदी जी के लेखन में निहित भाषा-चिंतन का एक बहुआयामी विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जो व्याकरणिक कठोरता के स्थान पर 'मनुष्यता' और 'लोक-जीवन' को प्राथमिकता देता है। द्विवेदी जी ने हिंदी को 'शुद्धतावाद' के संकुचित घेरे से बाहर निकालकर उसे एक जैविक और विकासशील इकाई माना, जिसका मूल लक्ष्य मानवीय संवेदनाओं का संप्रेषण है। उनके चिंतन में भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि संस्कृति, इतिहास और जातीय अस्मिता की वाहक है। द्विवेदी जी एक ऐसी जीवंत और लोकतांत्रिक हिंदी के पक्षधर थे, जिसमें जटिल पारिभाषिकता के बजाय प्रवाह, लोक-संवेदना और अन्य भाषाओं के शब्दों को पचाने की अद्भुत 'पाचन शक्ति' हो।वे हिंदी भाषा को इस देश के ही तरह एक 'महामानवसमुद्र' की भांति देखते हैं जिसमें विभिन्न संस्कृतियों के शब्द समाहित होकर उसे समृद्ध करते हैं। उनकी दृष्टि में वही भाषा कालजयी है जो शास्त्र की गरिमा और लोक की तरलता के बीच संतुलन साधते हुए जन-गण की चेतना को जागृत करने में सक्षम हो।

बीज शब्द : मानवतावाद, सांस्कृतिक भाषा-दृष्टि, लोक-जीवन, वाणी का डिक्टेटर, सामासिक संस्कृति, ऐतिहासिक शब्दावली, शब्द-समाजशास्त्र, भाषाई उदारता, अस्मिता, जीवंतता,

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का आगमन उस समय हुआ जब हिंदी अपनी पहचान और स्वरूप को लेकर संघर्ष कर रही थी। जहाँ आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी को एक सुव्यवस्थित तार्किक आधार दिया, वहीं द्विवेदी जी ने उसे 'परंपरा की ऐतिहासिकता' और 'लोक की सरलता' से जोड़ा। द्विवेदी जी का भाषा-चिंतन उनके 'मानवतावादी दृष्टिकोण' का विस्तार है। वे मानते थे कि भाषा कोई जड़ पदार्थ नहीं है जिसे नियमबद्ध करके स्थिर कर दिया जाए; बल्कि वह एक जैविक इकाई है जो समाज के साथ सांस लेती है।

उनका प्रसिद्ध सूत्र–"साहित्य का लक्ष्य मनुष्य है" सीधे तौर पर उनकी भाषा-दृष्टि को प्रभावित करता है। यदि साहित्य का लक्ष्य मनुष्य है, तो भाषा को भी उतना ही लचीला, उदार और समावेशी होना चाहिए जितना कि स्वयं मनुष्य। द्विवेदी जी के लेखन के परतों को खोलने पर हम पाते हैं कि जहाँ भाषा केवल सूचना नहीं, बल्कि एक 'सांस्कृतिक क्रांति' के रूप में उभरती है।

हिंदी शब्दसागर के अनुसार 'भाषा' का अर्थ -

"व्यक्त नाद की वह समष्टि जिसकी सहायता से किसी एक समाज या देश के लोग अपने मनोगत भाव तथा विचार एक दूसरे पर प्रकट करते हैं। मुख से उच्चारित होनेवाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है। बोली । जबान । वाणी..."[1]

द्विवेदी जी ने 'हिंदी शब्दसागर' की परिभाषाओं से आगे बढ़कर भाषा को समाजशास्त्र के चश्मे से देखा। उनके अनुसार, शब्द का अर्थ केवल 'कोश' में नहीं होता, बल्कि उसका वास्तविक अर्थ 'व्यवहार' में होता

* शोधार्थी, हिंदी विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
neet015bhu@gmail.com, 8601728724

है। द्विवेदी जी भाषा को एकदम सरल रूप में देखना चाहते हैं, इतना सरल और सहज कि अभिव्यक्ति को सहजता से प्रवाहित करे।"साहित्य में उन सारी बातों का जीवन्त विवरण होता है जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है। जीवन के जो पहलू हमें नजदीक से और स्थायी रूप से प्रभावित करते हैं उनके विषय में मनुष्य के अनुभवों के समझने का एकमात्र साधन साहित्य है। वस्तुतः जैसा कि एक पश्चिमी समालोचक ने कहा है- "भाषा के माध्यम से जीवन की अभिव्यक्ति का नाम ही साहित्य है।'"[2]

हिंदी शब्दसागर और आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के विचारों के मध्य एक गहरा वैचारिक विस्तार दिखाई देता है। जहाँ शब्दसागर भाषा को अभिव्यक्ति के यांत्रिक माध्यम और ध्वन्यात्मक समष्टि के रूप में परिभाषित करता है, वहीं द्विवेदी जी इसे सामाजिक व्यवहार और जीवंत अनुभव का विस्तार मानते हैं। उनके लिए भाषा केवल कोश का विषय नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं के संप्रेषण का सहज प्रवाह है।

द्विवेदी जी के अनुसार साहित्य की महत्ता उसकी लोक-व्याप्ति में है। वह मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है और व्यक्तिगत अनुभवों को सामाजिक धरातल पर प्रतिष्ठित कर उसे कालजयी बना देता है। द्विवेदी जी कहते हैं "हम साहित्य के किसी महान् ग्रंथ को इसलिये महान् नहीं कहते कि किसी व्यक्ति ने उसे महान् कह दिया है, बल्कि इसलिए कि उसके पढ़ने से हम मानव-जीवन को निविड़-भाव से अनुभव करते हैं। या तो हम उसमें अपने को ही पाते हैं या अपने इर्द-गिर्द के अनुभूत अर्थों को गाढ़ भाव से अनुभव करते हैं । पंडितों ने बताया कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसीलिए वह जिस प्रकार क्रिया-कलाप में सामाजिक बना रहता है, उसी प्रकार विचार में भी ।"[3]

जिस तरह वो समाज में अभिजात्यवाद के विरोधी थें,'अशोक के फूल' निबंध में कहते हैं "रवीन्द्रनाथ ने इस भारतवर्ष को 'महामानवसमुद्र' कहा है। विचित्र देश है यह ! असुर आये, आर्य आये, शक आये, हूण आये, नाग आये, यक्ष आये, गंधर्व आये न जाने कितनी मानव-जातियाँ यहाँ आई और आज के भारतवर्ष के बनाने में अपना हाथ लगा गई। जिसे हम हिन्दू रीति-नीति कहते हैं वह अनेक आर्य और आर्येतर उपादानों का अद्भुत मिश्रण है।"[4]

वैसे ही वो भाषा के 'अभिजातवाद' के कड़े विरोधी थे। उनका मानना था कि जब भाषा केवल शिक्षित वर्ग की दासी बन जाती है, तो वह अपनी सृजनात्मक ऊर्जा खो देती है। इसीलिए उन्होंने बार-बार 'लोक' की ओर लौटने का आग्रह किया। कुंतक की उक्ति के माध्यम से द्विवेदी जी कहते हैं ,"कुन्तक के मत का सारमर्म इस प्रकार है - केवल शब्द में भी कवित्व नहीं होता और केवल अर्थ में भी नहीं होता, शब्द और अर्थ दोनों के साहित्य अर्थात् एक साथ मिल कर भाव प्रकाश करने के सामंजस्य में काव्य होता है। काव्य में शब्द और अर्थ के साहित्य में एक विशिष्टता होनी चाहिए। जब कवि-प्रतिभा के बल पर एक वाक्य अन्य वाक्य के साथ एक विचित्र विन्यास में विन्यस्त होता है तब एक शब्द दूसरे से मिलकर रमणीय माधुर्य की सृष्टि करता है।"[5]

"आर्येतर उपादानों के मिश्रण, उनके जुड़ जाने या योगदान की बात वे अशोक, शिरीष, कुटज और वनस्पतियों पर लिखे कालजयी निबन्धों, हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियों और सामाजिक-ऐतिहासिक समस्याओं पर लिखे गए लेखों में भी निरन्तर करते हैं।"[6]

द्विवेदी जी के अनुसार भाषा केवल कोशगत अनुशासन नहीं, बल्कि 'मनुष्यता' की अभिव्यक्ति है। कुन्तक का 'शब्द-अर्थ सामंजस्य' जब द्विवेदी जी के 'लोक-जीवन' से मिलता है, तो भाषा जीवंत हो उठती है। उनके लिए वही विन्यास श्रेष्ठ है जो सामाजिक अनुभव को सहजता से संप्रेषित कर सके।

द्विवेदी जी ने 'कबीर' पर जो शोध किया, वह वास्तव में भाषा के एक नए दर्शन की खोज थी। कबीर की भाषा को 'सधुक्कड़ी' या 'पंचमेल खिचड़ी' कहकर उपेक्षित किया गया था, लेकिन द्विवेदी जी ने उसे 'वाणी का डिक्टेटर' सिद्ध किया।

द्विवेदी जी भाव की प्रधानता पर बल देते हैं।यदि विचार प्रबल हैं, तो भाषा को उनके पीछे चलना होगा।जब व्याकरण बनाम अभिव्यक्ति की बात हो तो द्विवेदी जी कबीर के माध्यम से बताए हैं कि कबीर व्याकरण की परवाह नहीं की, फिर भी उनकी भाषा सबसे अधिक प्रभावशाली है।

द्विवेदी जी लिखते हैं– "भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया-बन गया है तो सीधे-सीधे, नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार-सी नजर आती है। उसमें मानो ऐसी हिम्मत ही नहीं है कि इस लापरवा फक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके।"[7]

कबीर के भाषा-चिंतन में यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि साहित्य का वास्तविक मूल्य उसकी अभिव्यक्ति की जटिलता या अलंकारिकता में नहीं, अपितु उसके उद्देश्य की सिद्धि में निहित है। वे मानते हैं कि साहित्य वही सार्थक है, जो जनमानस तक पहुँचकर उनके हृदय और व्यवहार में परिवर्तन ला सके,अर्थात् उसकी प्रभावशीलता ही उसकी श्रेष्ठता का मापदंड है। कबीर के संदर्भ में द्विवेदी जी लिखते हैं"अत्यंत सीधी भाषा में वे ऐसी चोट करते हैं कि चोट खानेवाला केवल धूल झाड़के चल देने के सिवा और कोई रास्ता नहीं पाता।"[8]

द्विवेदी जी को यह स्थापना भाषा-विज्ञान की इस धारणा को पुष्ट करती है कि 'प्रयोग' ही भाषा का असली स्वामी है।किसी विषय पर बात करते हुए द्विवेदी जी अभीष्ट शब्द के सांस्कृतिक स्मृति और ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान पर ध्यान देते हैं,द्विवेदी जी ने शब्दों को 'इतिहास के गवाह' के रूप में देखा। जब वे किसी शब्द का प्रयोग करते हैं, तो वे उसके पूरे 'सांस्कृतिक भूगोल' को साथ लेकर आते हैं। संस्कृति शब्द पर बात करते हुए द्विवेदी जी कहते हैं "जिसे हम 'संस्कृति' शब्द द्वारा व्यक्त करते हैं। यह संस्कृति शब्द बहुत अधिक प्रचलित है तथापि यह अस्पष्ट रूप में ही समझा जाता है। इसकी सर्वसम्मत कोई परिभाषा नहीं बन सकी है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि और संस्कारों के अनुसार इसका अर्थ समझ लेता है।" [9]

अशोक के फूल और कुटज जैसे निबंधों में उन्होंने दिखाया कि कैसे आर्य, द्रविड़, निषाद और शक-हूण संस्कृतियों के शब्द हिंदी में आकर घुल-मिल गए हैं। वे शब्दों के आने-जाने को जातियों के इतिहास से जोड़ते हैं। उदाहरण के लिए, 'नीलकमल' या 'सिंदूर' जैसे शब्दों के पीछे वे अनार्य संस्कृतियों के योगदान को रेखांकित करते हैं। यह दृष्टि हिंदी को एक 'सामासिक भाषा' के रूप में प्रतिष्ठित करती है।"अपभ्रंश-ग्रन्धों के प्रकाशन से अनेक तथ्यों का उद्घाटन हुआ है। जब-जब कोई जाति नवीन जातियों के सम्पर्क में आती है तब-तब उसमें नई प्रवृत्तियाँ आती हैं, नई आचार-परम्परा का प्रचलन होता है, नये काव्य-रूपों की उद्भावना होती है और नये छन्दों में जनचित्त मुखर हो उठता है। नया छन्द नये मनोभाव की सूचना देता है।"[10] "मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उसके हृदय को परदुःखकातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।"[11]

द्विवेदी जी के उपन्यासों का भाषाई वैभव दिखता है।

द्विवेदी जी के चार महत्वपूर्ण उपन्यास–'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारु चंद्रलेख', 'पुनर्नवा' और 'अनामदास का पोथा'–भाषा के चार अलग-अलग प्रयोगात्मक धरातल हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में सातवीं शताब्दी के वैभव को रचने वाली अलंकृत और गूँजती हुई संस्कृतनिष्ठ 'कोमल-कांत पदावली' का सौंदर्य है, तो 'चारु चंद्रलेख' में मध्यकालीन तंत्र-साधना और सामंती परिवेश को अभिव्यक्त करने वाली ऐतिहासिक व कल्पनाप्रधान भाषा का प्रवाह है। वहीं 'पुनर्नवा' की भाषा लोक-संस्कृति के मेल से सामाजिक और दार्शनिक विमर्श को सहजता प्रदान करती है, जबकि 'अनामदास का पोथा' में उपनिषद कालीन परिवेश के अनुरूप ऋषियों जैसी सरल, संक्षिप्त और सूक्तिपरक आध्यात्मिक भाषा का चरम उत्कर्ष दिखाई देता है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी के साथ केवल उन्हीं विदेशी शब्दों का संयमित प्रयोग किया है, जिनके माध्यम से भाषा की अतितत्समनिष्ठता, दुरूहता और अजनबीपन का निवारण संभव हो सका है।'हमारी राष्ट्रीय शिक्षा - प्रणाली' निबंध में आए,विदेशज शब्द निबंध को सहज बना देता है।कुछ उदाहरण दृष्टव है - हिस्सा, जरूरत, खर्च, याद, उम्र, कोशिश, हाल, मौका, अदद, आसपास, सरकारी।

द्विवेदी जी ने अंग्रेजी के शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद से गढ़ी गई 'कृत्रिम हिंदी' का कड़ा विरोध किया। उनका मानना था कि अनुवाद आधारित भाषा अपनी मौलिकता और सांस्कृतिक स्वाभाविकता खो देती है। वे ऐसी जीवंत हिंदी के पक्षधर थे, जिसमें भारतीय मनीषा और लोक-संवेदना रची-बसी हो, न कि विदेशी ढांचों का अनुसरण।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी उन शब्दों का विरोध करते हैं जिनके मूल अर्थ में ही वैचारिक दोष हो। अपने निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' में उन्होंने 'इंडिपेंडेंस' शब्द की कड़ी आलोचना की है। उनके अनुसार, यह शब्द केवल 'किसी के अधीन न होने' का नकारात्मक भाव देता है। इसके विपरीत, वे 'स्वाधीनता' शब्द को श्रेष्ठ मानते हैं, क्योंकि उसमें 'स्व' का बंधन और आत्म-अनुशासन निहित है, जो मनुष्य को पशुता से अलग करता है। वो कहते हैं "15 अगस्त को जब अंग्रेज़ी भाषा के पत्र 'इंडिपेंडेंस' की घोषणा कर रहे थे, देशी भाषा के पत्र 'स्वाधीनता-दिवस' की चर्चा कर रहे थे 'इंडिपेंडेंस' का अर्थ है अनधीनता या किसी की अधीनता का अभाव, पर 'स्वाधीनता' शब्द का अर्थ है अपने ही अधीन रहना। अंग्रेज़ी में कहना हो, तो 'सेल्फ़डिपेंडेंस' कह सकते हैं। मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि इतने दिनों तक अंग्रेज़ी की अनुवर्तिता करने के बाद भी भारतवर्ष 'इंडिपेंडेंस' को अनधीनता क्यों नहीं कह सका? उसने अपनी आज़ादी के जितने भी नामकरण किए–स्वतंत्रता, स्वराज्य, स्वाधीनता– उन सबमें 'स्व' का बंधन अवश्य रखा।"[12]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के ललित निबंधों, जैसे देवदारु और शिरीष के फूल की भाषिक संरचना में विनोद का एक अद्भुत पुट मिलता है। उनकी शैली की यह विलक्षणता है कि वे गंभीरतम दार्शनिक मीमांसा और गहन सांस्कृतिक विमर्श को भी अत्यंत आत्मीय, अनौपचारिक और सरस शब्दावली में संप्रेषित कर देते हैं। पांडित्य के बोझ को दरकिनार कर, वे पाठक से एक सखा की भाँति संवाद करते हैं, जिससे उनके निबंधों में दार्शनिकता बोझिल न होकर सहज बोधगम्य और रसात्मक बन जाती है।

'शिरीष के फूल' की भाषा देखने योग्य है।"एक-एक बार मुझे मालूम होता है कि यह शिरीष एक अद्भुत अवधूत है। दुःख हो या सुख, वह हार नहीं मानता। न ऊधो का लेना, न माधो का देना। जब धरती और आसमान जलते रहते हैं, तब भी यह हज़रत न जाने कहाँ से अपना रस खींचते रहते हैं। मौज में आठों याम मस्त रहते हैं।"[13]

द्विवेदी जी जहाँ आवश्यक हो, वहाँ वातावरण के निर्माण के लिए तत्सम शब्दों का सटीक प्रयोग करते हैं। उनकी यह भाषिक विशेषता अत्यंत सहज और प्रभावी लगती है। इसमें कहीं भी बनावटीपन या पांडित्य प्रदर्शन का आभास नहीं होता, बल्कि यह विषय की गहराई को उभारने में सहायक सिद्ध होती है। निपुणिका बाण से कहती है "तुम जड़ पाषाण-पिंड हो; तुम्हारे भीतर न देवता है, न पशु; है एक अडिग जड़ता " [14]

द्विवेदी जी का मानना था कि भाषा का वास्तविक स्वामी वह जनसमूह है, जो उसे जीता है। उनके अनुसार, भाषा को ऊपर से थोपा नहीं जा सकता। लोकतंत्र में भाषा वही सार्थक है जो शासन और जनता के बीच की दूरी को समाप्त करे। वे पारिभाषिक शब्दावली के उस कृत्रिम बोझ के विरोधी थे, जो आम आदमी को ज्ञान की मुख्यधारा से बाहर कर देता है। वो लोकतांत्रिक भाषा के समर्थक थें। निबंध 'भाषा योजना की समस्या' के शुरुआत में ही कहते हैं "मुख्य बात यह है कि साधारण जनता का जो शासन है, चाहे वह शासन कैसा भी हो यही जनतन्त्र है। वह कोई स्थिर वस्तु नहीं है- जैसा कि अभी तक हमने एक संविधान बनाया है, जिसमें अनेक संशोधन किये और होते रहते हैं। लगता है कि यह प्रक्रिया कुछ दिन और चलेगी। मगर जनतन्त्र का सीधा अर्थ

है- साधारण जनता का शासन, साधारण जनता का राज्य। साधारण जनता की वह बोली जिसमें साधारण जनता बातचीत करती है, बोलती है, कहती है, सुनती है, विचारती है।"[15]

द्विवेदी जी ने भाषा की 'पाचन शक्ति' पर विशेष बल दिया है। वे कहते हैं कि दूसरी भाषाओं से शब्द उधार लेना बुरा नहीं है, बशर्ते हम उन्हें अपनी भाषा की प्रकृति में पचा सकें। केवल अंग्रेजी शब्दों का हिंदी पर्याय खोज लेना भाषा का विकास नहीं है।

'भाषा-योजना की समस्या' निबंध में द्विवेदी जी ने 'आत्मसातीकरण' और भाषा की 'जीवंतता' को समझाने के लिए सुंदर रूपक का प्रयोग किया है। पूरी उक्ति इस प्रकार है:"अच्छे विचारक, विज्ञानवेत्ता और जो ज्ञान के विविध क्षेत्रों में काम करते हैं, वे उन शब्दों पर स्वायत्त करके अपने-आप में उसी प्रकार पचाकर भाषा दें जिस प्रकार गाय दूध देती है। वह यह नहीं करती कि जो घास खाये, उसको उगल पहले दे। वह खाद्य वस्तु को पचाती है, बाद में उसको मीठा बनाकर दूध के रूप में देती है। वही जीवन्त वस्तु होती है, और ग्राह्य वस्तु होती है।"[16]

द्विवेदी जी का भाषा चिंतन शब्दों के ढेर के बजाय प्रवाह और जीवंतता पर केंद्रित है। उनके अनुसार, भाषा कोई निर्जीव ढांचा नहीं बल्कि एक प्राणवान शक्ति है। यदि भाषा में सहज प्रवाह न हो, तो वह बोझिल और असंगत हो जाती है।

"शब्द बहुत-से हों लेकिन प्रवाह न हो, ऐसी भाषा बनाना असंगत है। भाषा की अपनी जीवन्तता है, प्रवाह है, उसको हमें रखना होगा, तभी भाषा सही रूप में बनेगी।" [17]

हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भाषा के संदर्भ में उन कठिन और जटिल शब्दों का विरोध किया है, जो सामान्य जन के लिए समझ से परे होकर 'भूलभुलैया' का रूप ले लेते हैं। उनका मानना था कि भाषा का उद्देश्य विचारों का स्पष्ट और सहज संप्रेषण है, न कि पाठक को उलझन में डालना। इसलिए वे ऐसी सरल, स्वाभाविक और प्रांजल भाषा के पक्षधर थे, जिसे आम आदमी बिना किसी कठिनाई के समझ सके और उससे जुड़ाव महसूस करे।

"हम जो अभी तक इस भूलभुलैया में पड़े हैं कि हमारे देश की भाषा इस योग्य है ही नहीं कि हम उसमें ऊँची-से-ऊँची शिक्षा दे सकें। हमारा यह भ्रम शीघ्र ही भंग होगा। साधारण जनता जिस समय उग्र रूप में प्रकट होगी, उस समय हम उसका निवारण नहीं कर सकेंगे।"[18]

द्विवेदी जी का मानना था कि भारतीय ज्ञान परंपरा को समझने के लिए भाषा के 'संकेतों' को समझना जरूरी है। उन्होंने 'नाथों' और 'सिद्धों' की शब्दावली का विश्लेषण करते हुए यह दिखाया कि कैसे 'संधा भाषा' या 'उलटबांसियों' के माध्यम से गूढ़ आध्यात्मिक सत्यों को व्यक्त किया जाता था। उन्होंने हिंदी को 'अपभ्रंश' का उत्तराधिकारी मानकर उसकी ऐतिहासिक निरंतरता सिद्ध की।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी साहित्य के उन विरल चिंतकों में से हैं, जिन्होंने भाषा को केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि एक 'जीवंत सामाजिक प्रक्रिया' और 'सांस्कृतिक वाहक' के रूप में देखा। उनका भाषा चिंतन पांडित्य और लोक-चेतना के अद्भुत संगम पर टिका है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का भाषा-चिंतन किसी व्याकरणिक चौखटे में बंद विचार नहीं है, बल्कि वह भारतीय मनीषा के हज़ारों वर्षों के विकास की एक जीवंत प्रतिध्वनि है। उन्होंने हिंदी को केवल एक संपर्क भाषा के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी 'सांस्कृतिक शक्ति' के रूप में देखा जो अतीत के गौरव और भविष्य की प्रगति के बीच सेतु का कार्य करती है।

द्विवेदी जी के लेखन में भाषा का स्वरूप 'पात्र' और 'परिवेश' के अनुसार बदलता है–जहाँ एक ओर बाणभट्ट की आत्मकथा में वह 'क्लासिक' गरिमा से मंडित है, वहीं कबीर के विवेचन में वह 'फक्कड़पन' और

'विद्रोह' की संवाहिका बन जाती है। उनका स्पष्ट मानना था कि भाषा मनुष्य के लिए है, मनुष्य भाषा के लिए नहीं।

द्विवेदी जी का भाषा-दर्शन हमें यह संदेश देता है कि शब्द जब तक 'लोक' की मिट्टी से रस नहीं खींचते, वे प्राणवान नहीं होते। उनकी दृष्टि में हिंदी की शक्ति उसकी 'समावेशिता' में है। उन्होंने हिंदी को एक ऐसी 'मजबूत पीठिका' प्रदान की जहाँ वह अपनी जड़ों से भी जुड़ी रही और आधुनिकता के आकाश में भी पंख फैला सकी। आज के वैश्वीकरण के दौर में, जब भाषाएँ अपनी मौलिकता खो रही हैं, द्विवेदी जी का 'सांस्कृतिक भाषा-बोध' हमें अपनी अस्मिता को बचाए रखने का सबसे सार्थक मार्ग दिखाता है।

संदर्भ सूची

1. श्यामसुंदर दास।. हिंदी शब्दसागर (पृ. 3654) उपलब्ध : https://dsal.uchicago.edu/cgi-bin/app/dasa-hindi_query.py?qs=%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B7%E0%A4%BE&searchhws=yes&matchtype=exact
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (1991). साहित्य सहचर (पृ. 3)। लोकभारती।
3. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (1991). साहित्य सहचर (वहीं)। लोकभारती।
4. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (1948). अशोक के फूल (पृ. 3)। सस्ता साहित्य मंडल।
5. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (1991). साहित्य सहचर (पृ. 126)। लोकभारती।
6. विश्वनाथ त्रिपाठी। (2012). व्योमकेश दरवेश (पृ. 419)। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2018). कबीर (पृ. 170)। राजकमल प्रकाशन।
8. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2018). कबीर (वहीं)। राजकमल प्रकाशन।
9. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2019). अशोक के फूल (पृ. 67, “भारतीय संस्कृति की दें”)। लोकभारती।
10. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2025). हिंदी साहित्य का आदिकाल (पृ. 134)। वाणी प्रकाशन।
11. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (1948). अशोक के फूल (पृ. 143)। सस्ता साहित्य मंडल।
12. हजारीप्रसाद द्विवेदी। . कल्पलता (पृ. 11-17)। ज्ञानमंडल लिमिटेड, बनारस।
13. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2022). आरोह (भाग-2) (पृ. 113)। एन.सी.ई.आर.टी।
14. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2023). बाणभट्ट की आत्मकथा (पृ. 24)। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
15. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2009). भाषा, साहित्य और देश (पृ. 18)। भारतीय ज्ञानपीठ।
16. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2009). भाषा, साहित्य और देश (पृ. 23)। भारतीय ज्ञानपीठ।
17. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2009). भाषा, साहित्य और देश (वहीं)। भारतीय ज्ञानपीठ।
18. हजारीप्रसाद द्विवेदी। (2009). भाषा, साहित्य और देश (पृ. 19)। भारतीय ज्ञानपीठ।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में वित्तीय सशक्तिकरण में पंचायती राज व्यवस्था की भूमिका

पंकज कुमार सिंह*

सार

भारत एक ग्रामीण प्रधान देश है जहाँ अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है। ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए स्थानीय स्वशासन की प्रभावी व्यवस्था आवश्यक है। इसी उद्देश्य से पंचायती राज व्यवस्था को विकसित किया गया। पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण प्रशासन की ऐसी प्रणाली हैं जो स्थानीय स्तर पर लोकतंत्र को मजबूत करती हैं और विकास योजनाओं को प्रभावी रूप से लागू करने में सहायता करती हैं। ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण का अर्थ है ग्रामीण लोगों को आर्थिक रूप से सक्षम और आत्मनिर्भर बनाना। इसके अंतर्गत रोजगार के अवसर प्रदान करना, आय के स्रोतों में वृद्धि करना और वित्तीय संसाधनों तक उनकी पहुंच सुनिश्चित करना शामिल है। पंचायती राज संस्थाएँ विभिन्न सरकारी योजनाओं जैसे मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना और ग्रामीण आजीविका मिशन के माध्यम से ग्रामीण लोगों को आर्थिक सहायता और रोजगार उपलब्ध कराती हैं। इसके अतिरिक्त पंचायतें स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन, बुनियादी सुविधाओं के विकास और महिलाओं के सशक्तिकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था होने से उनकी भागीदारी बढ़ी है और वे विकास कार्यों में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। इस प्रकार पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सशक्तिकरण और समग्र विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण माध्यम है, जो ग्रामीण समाज को आर्थिक रूप से मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

मूल शब्द (Key Words) : पंचायती राज व्यवस्था, ग्रामीण विकास, वित्तीय सशक्तिकरण, स्थानीय स्वशासन, ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद, विकेंद्रीकरण, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, रोजगार सृजन, सरकारी योजनाएँ, मनरेगा, स्वयं सहायता समूह (SHG), महिला सशक्तिकरण, वित्तीय समावेशन।

भूमिका

भारत को लंबे समय से एक ग्रामीण प्रधान देश के रूप में जाना जाता है, जहाँ आज भी जनसंख्या का बड़ा भाग गांवों में निवास करता है। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के बिना भारत का समग्र विकास संभव नहीं है। इसी कारण स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत सरकार ने ग्रामीण विकास और स्थानीय स्वशासन को सुदृढ़ करने के लिए अनेक प्रयास किए हैं। इन प्रयासों में पंचायती राज व्यवस्था का विशेष महत्व है। पंचायती राज संस्थाएँ स्थानीय स्वशासन की वह प्रणाली हैं जिनके माध्यम से गांवों के लोग अपने विकास से संबंधित निर्णय स्वयं ले सकते हैं और उन्हें क्रियान्वित भी कर सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक प्रगति, सामाजिक सुधार और प्रशासनिक विकेंद्रीकरण के लिए पंचायती राज व्यवस्था एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में कार्य करती है। ग्रामीण परिवेश में वित्तीय सशक्तिकरण का अर्थ है ग्रामीण समाज के लोगों को आर्थिक रूप से सक्षम बनाना, उनकी आय के स्रोतों में वृद्धि करना, रोजगार के अवसर प्रदान करना तथा उन्हें वित्तीय संसाधनों तक समान रूप से पहुंच उपलब्ध कराना। जब ग्रामीण लोग आर्थिक रूप से सशक्त होते हैं, तब वे अपने जीवन स्तर में सुधार कर सकते हैं और शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सामाजिक विकास के क्षेत्रों में भी प्रगति कर सकते हैं। इस दृष्टि से पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत में पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के माध्यम से प्राप्त हुई। इस संशोधन के अंतर्गत ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद के रूप में तीन स्तरीय पंचायती राज संरचना स्थापित की गई। इस व्यवस्था का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में लोकतंत्र को मजबूत करना और स्थानीय स्तर पर विकास योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करना है। पंचायती राज संस्थाओं को अनेक प्रशासनिक और वित्तीय अधिकार प्रदान किए गए हैं, जिनके माध्यम से वे ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में सक्रिय भूमिका निभा सकती हैं।

* शोधार्थी, अर्थशास्त्र, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बहराइच, उ.प्र.

ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका कई स्तरों पर दिखाई देती है। सबसे पहले, पंचायतें केंद्र और राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न विकास योजनाओं को ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुंचाने का कार्य करती हैं। उदाहरण के लिए, मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना, स्वच्छ भारत मिशन, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन आदि योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण लोगों को रोजगार के अवसर, आवास सुविधाएँ और आर्थिक सहायता प्राप्त होती है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

दूसरे, पंचायतें स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। गांवों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन जैसे जल स्रोत, भूमि, वन और खनिज संसाधन ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। पंचायतें इन संसाधनों के संरक्षण और उचित उपयोग के लिए विभिन्न योजनाएँ बनाती हैं। यदि इन संसाधनों का सही ढंग से उपयोग किया जाए तो ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा दिया जा सकता है और लोगों की आय में वृद्धि की जा सकती है।

तीसरे, पंचायतें ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन के अवसर प्रदान करती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी और अल्परोजगार एक बड़ी समस्या है। पंचायतें विभिन्न विकास परियोजनाओं के माध्यम से रोजगार के अवसर उत्पन्न करती हैं, जैसे सड़क निर्माण, तालाब निर्माण, सिंचाई परियोजनाएँ, सामुदायिक भवनों का निर्माण आदि। इन कार्यों में स्थानीय श्रमिकों को रोजगार मिलता है और इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी मजबूती मिलती है।

चौथे, पंचायती राज व्यवस्था महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है, जिसके कारण ग्रामीण महिलाओं की राजनीतिक और आर्थिक भागीदारी में वृद्धि हुई है। महिलाएँ पंचायतों के माध्यम से विभिन्न विकास योजनाओं में सक्रिय भूमिका निभाती हैं और स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से छोटे–छोटे व्यवसायों की शुरुआत भी करती हैं। इससे ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार होता है और वे आत्मनिर्भर बनने की दिशा में अग्रसर होती हैं।

पाँचवें, पंचायतें स्थानीय स्तर पर कर और शुल्क एकत्र करके विकास कार्यों के लिए वित्तीय संसाधन जुटाती हैं। पंचायतों को घर कर, बाजार शुल्क, जल कर आदि के माध्यम से राजस्व संग्रह करने का अधिकार प्राप्त होता है। इन संसाधनों का उपयोग गांवों में बुनियादी सुविधाओं के विकास के लिए किया जाता है, जैसे सड़क, जलापूर्ति, स्वच्छता और शिक्षा सुविधाएँ। इस प्रकार पंचायतें ग्रामीण विकास के लिए वित्तीय आधार तैयार करती हैं।

इसके अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वित्तीय समावेशन का अर्थ है समाज के सभी वर्गों को बैंकिंग और वित्तीय सेवाओं तक पहुंच उपलब्ध कराना। पंचायतें जन धन योजना, स्वयं सहायता समूहों और माइक्रोफाइनेंस योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण लोगों को बैंकिंग सेवाओं से जोड़ने का कार्य करती हैं। इससे गरीब और वंचित वर्ग भी आर्थिक गतिविधियों में भागीदारी कर पाते हैं और उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

हालाँकि पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, फिर भी इसके सामने कई चुनौतियाँ भी मौजूद हैं। कई पंचायतों के पास पर्याप्त वित्तीय संसाधन नहीं होते, जिससे वे विकास कार्यों को प्रभावी ढंग से लागू नहीं कर पातीं। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक क्षमता की कमी, भ्रष्टाचार, राजनीतिक हस्तक्षेप और जागरूकता की कमी जैसी समस्याएँ भी पंचायती राज व्यवस्था की प्रभावशीलता को प्रभावित करती हैं। इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए पंचायतों को अधिक वित्तीय अधिकार, प्रशिक्षण और पारदर्शिता की व्यवस्था प्रदान करना आवश्यक है।

इसके बावजूद यह तथ्य स्पष्ट है कि पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण विकास और वित्तीय सशक्तिकरण की प्रक्रिया में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यदि इन संस्थाओं को पर्याप्त संसाधन, अधिकार और सहयोग प्राप्त हो, तो वे ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास में और अधिक प्रभावी भूमिका निभा सकती हैं। पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण लोग अपने विकास से संबंधित निर्णयों में सक्रिय भागीदारी कर सकते हैं और अपने संसाधनों का बेहतर उपयोग कर सकते हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण परिवेश में वित्तीय सशक्तिकरण के लिए पंचायती राज व्यवस्था एक महत्वपूर्ण माध्यम है। यह न केवल लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को बढ़ावा देती है, बल्कि ग्रामीण समाज को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। यदि पंचायतों को मजबूत किया

जाए और उनके कार्यों में पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चित की जाए, तो वे ग्रामीण भारत के विकास में एक सशक्त आधार बन सकती हैं।

ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण का अर्थ

ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण का तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को आर्थिक रूप से सक्षम, आत्मनिर्भर और सुरक्षित बनाना है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि ग्रामीण समाज के प्रत्येक व्यक्ति को आय के पर्याप्त साधन प्राप्त हों, रोजगार के अवसर उपलब्ध हों तथा वे बैंकिंग और अन्य वित्तीय सेवाओं तक आसानी से पहुँच बना सकें। जब ग्रामीण लोग आर्थिक रूप से मजबूत होते हैं, तब वे अपने जीवन स्तर में सुधार कर सकते हैं और शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सामाजिक विकास के क्षेत्रों में भी प्रगति कर सकते हैं। ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण के अंतर्गत ग्रामीण लोगों को बचत, ऋण, बीमा और निवेश जैसी वित्तीय सुविधाओं का लाभ प्रदान किया जाता है। इसके माध्यम से किसानों, मजदूरों, छोटे व्यापारियों और महिलाओं को आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने का अवसर मिलता है। स्वयं सहायता समूहों, सहकारी समितियों और सरकारी योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण लोगों को आर्थिक सहायता और प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है, जिससे वे छोटे व्यवसाय और स्वरोजगार के माध्यम से अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

इस प्रकार ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण केवल आर्थिक सहायता प्रदान करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण समाज को आत्मनिर्भर और सशक्त बनाने की एक व्यापक प्रक्रिया है। इसके माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी को कम किया जा सकता है और समग्र सामाजिक एवं आर्थिक विकास को बढ़ावा दिया जा सकता है।

ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण में पंचायती राज की भूमिका

ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास और वित्तीय सशक्तिकरण में पंचायती राज संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पंचायती राज व्यवस्था स्थानीय स्वशासन की ऐसी प्रणाली है जिसके माध्यम से गांवों के लोग अपने विकास से संबंधित निर्णयों में भाग लेते हैं और उन्हें क्रियान्वित करते हैं। यह व्यवस्था ग्रामीण समाज को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में सहायक सिद्ध होती है। पंचायती राज संस्थाएँ केंद्र और राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न विकास योजनाओं को ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँचाने का कार्य करती हैं। मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसी योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण लोगों को रोजगार, आवास और आर्थिक सहायता प्राप्त होती है। इन योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायतों की सक्रिय भागीदारी होती है, जिससे ग्रामीण लोगों की आय में वृद्धि होती है और उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

इसके अतिरिक्त पंचायतें स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन और विकास कार्यों के संचालन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सड़क निर्माण, जल संरक्षण, सिंचाई व्यवस्था और अन्य बुनियादी सुविधाओं के विकास के माध्यम से पंचायतें ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाती हैं। पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था होने से महिला सशक्तिकरण को भी बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण वित्तीय सशक्तिकरण की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में कार्य करती हैं और ग्रामीण समाज के समग्र आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

ग्रामीण विकास में पंचायती राज की चुनौतियाँ

ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, फिर भी इनके सामने कई प्रकार की चुनौतियाँ मौजूद हैं जो इनके कार्यों की प्रभावशीलता को प्रभावित करती हैं। सबसे बड़ी चुनौती वित्तीय संसाधनों की कमी है। कई पंचायतों के पास पर्याप्त धन नहीं होता, जिसके कारण वे विकास योजनाओं को पूरी तरह से लागू नहीं कर पातीं। इसके अतिरिक्त पंचायतों की आय के स्रोत भी सीमित होते हैं, जिससे आर्थिक योजनाओं के संचालन में कठिनाई उत्पन्न होती है। दूसरी प्रमुख चुनौती प्रशासनिक क्षमता की कमी है। कई पंचायत प्रतिनिधियों को प्रशासनिक कार्यों, योजनाओं के प्रबंधन और वित्तीय व्यवस्था का पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं होता। इसके कारण योजनाओं के क्रियान्वयन में कई बार समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इसके साथ ही भ्रष्टाचार और पारदर्शिता की कमी भी एक महत्वपूर्ण समस्या है, जिससे विकास योजनाओं का लाभ कई बार वास्तविक लाभार्थियों तक नहीं पहुँच पाता।

राजनीतिक हस्तक्षेप भी पंचायती राज संस्थाओं की कार्यप्रणाली को प्रभावित करता है। कई बार स्थानीय राजनीति के कारण विकास कार्यों में बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण लोगों में जागरूकता की कमी भी एक चुनौती है, जिससे वे पंचायतों की योजनाओं और अधिकारों का पूर्ण लाभ नहीं

उठा पाते। इस प्रकार इन चुनौतियों के समाधान के लिए पंचायतों को अधिक वित्तीय अधिकार, उचित प्रशिक्षण तथा पारदर्शी प्रशासनिक व्यवस्था प्रदान करना आवश्यक है, ताकि ग्रामीण विकास को प्रभावी ढंग से आगे बढ़ाया जा सके।

निष्कर्ष

ग्रामीण परिवेश में वित्तीय सशक्तिकरण के लिए पंचायती राज संस्थाएँ एक महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में कार्य करती हैं। यह व्यवस्था स्थानीय स्वशासन को मजबूत बनाती है और ग्रामीण लोगों को अपने विकास से संबंधित निर्णयों में भाग लेने का अवसर प्रदान करती है। पंचायती राज प्रणाली के माध्यम से विभिन्न सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन गांवों तक प्रभावी ढंग से पहुँचता है, जिससे ग्रामीण लोगों को रोजगार, आवास और अन्य आर्थिक सुविधाएँ प्राप्त होती हैं।

पंचायतें स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन, बुनियादी सुविधाओं के विकास तथा रोजगार सृजन के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाती हैं। इसके साथ ही पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था होने से महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है और उनके सामाजिक तथा आर्थिक सशक्तिकरण को भी बढ़ावा मिला है। इस प्रकार पंचायती राज संस्थाएँ ग्रामीण समाज के समग्र विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

हालाँकि पंचायती राज व्यवस्था के सामने वित्तीय संसाधनों की कमी, प्रशासनिक क्षमता की कमी और पारदर्शिता से जुड़ी कुछ चुनौतियाँ भी हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए पंचायतों को अधिक वित्तीय अधिकार, प्रशिक्षण और जागरूकता प्रदान करना आवश्यक है। यदि इन संस्थाओं को सशक्त बनाया जाए, तो वे ग्रामीण भारत के आर्थिक और सामाजिक विकास को और अधिक प्रभावी ढंग से आगे बढ़ा सकती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सिंह, आर. पी. (2015) *भारतीय पंचायती राज व्यवस्था* नई दिल्लीः ओरिएंट ब्लैकस्वान, पृ. 45–60।
शर्मा, के. एल. (2012) *ग्रामीण समाजशास्त्र* जयपुरः रावत पब्लिकेशन, पृ. 120–135।
यादव, एस. पी. (2016) *ग्रामीण विकास और पंचायती राज* नई दिल्लीःराधा पब्लिकेशन, पृ. 80–95।
मिश्रा, एस. एन. (2014) *भारत में पंचायती राज* नई दिल्लीः कंसेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, पृ. 150–165।
सिंह, कंवलजीत (2013) *ग्रामीण विकास का समाजशास्त्र* नई दिल्लीः ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, पृ. 90–105।
अग्रवाल, आर. सी. (2017) *भारतीय शासन और राजनीति* नई दिल्लीः एस. चंद एंड कंपनी, पृ. 210–225।
अवस्थी, ए. एवं महेश्वरी, एस. आर. (2011). *लोक प्रशासन* आगराः लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, पृ. 175–190।
दुबे, एस. सी. (2009) *भारतीय ग्राम* नई दिल्लीःनेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृ. 60–75।
महेश्वरी, एस. आर. (2010) *भारत में स्थानीय शासन* नई दिल्ली लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, पृ. 130–145।
त्रिपाठी, पी. एन. (2018) *ग्रामीण विकास की समस्याएँ और समाधान* वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन, पृ. 95–110

भारत में आदिवासी भाषाओं का संरक्षण : एक आलोचनात्मक मूल्यांकन

अंशु कुमार राय*

सारांश

भारत की भाषाई विरासत अत्यंत समृद्ध है, जो पूर्वी भारत के आदिवासी समुदायों के ऐतिहासिक महत्व व सांस्कृतिक विरासत की अमूल्य धरोहर है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 350, भाषाई अल्पसंख्यकों को संरक्षण प्रदत्त करता है जबकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में देने पर जोर दिया गया है। संविधान के अनुच्छेद 29 व 30 शैक्षिक अधिकारों को सुनिश्चित करते हैं तथा अनुच्छेद 46 राज्य को अनुसूचित जातियों व जनजातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों को संरक्षित करने का निर्देश देता है। संविधान की पांचवीं अनुसूची अनुसूचित क्षेत्रों में विशेष प्रशासनिक प्रावधानों की संस्तुति करती है। इसी पांचवीं अनुसूची के प्रकाश में आदिवासी स्वशासन को मजबूत करने हेतु पेसा (पंचायत अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम 1996 लागू किया गया। राज्य सरकारें स्थानीय भाषाओं में पाठ्यक्रम विकास डिजिटल शिक्षण सामग्री निर्माण और बहुभाषी शिक्षण प्रणाली के माध्यम से आदिवासी भाषाओं के संरक्षण की दिशा में सक्रिय हैं। ऐसे प्रयास न सिर्फ शैक्षिक स्तर में वृद्धि लाने बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता को सकारात्मक दिशा देने की ओर अग्रसर हैं। यद्यपि सरकार द्वारा नित-नये प्रयोग किए जा रहे हैं फिर भी भाषाई अधिकारों के संरक्षण की दिशा में प्रभावी कदम उठाने में असफल रहे हैं।

यह लेख भारत में आदिवासी समुदायों के भाषाई अधिकारों के संरक्षण हेतु अपनाए जाने वाले विभिन्न प्रावधानों, कार्यक्रमों, नीतियों एवं प्रयासों के महत्वपूर्ण पहलुओं का विश्लेषक करता है। यह अध्ययन सैद्धांतिक शोध पद्धति पर आधारित है, जिसमें द्वितीयक स्रोतों जैसे- नीतियों, रिपोर्टों, सरकारी दस्तावेजों और शैक्षणिक साहित्य से आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है।

कीवर्ड्स- आदिवासी भाषाएँ, भाषाई अधिकार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, बहुभाषायी शिक्षा, नीति विश्लेषण।

प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही भारतीय समाज की संस्कृति और भाषाई विविधता अत्यंत समृद्ध रही है। 2011 की 15वीं जनगणना के अनुसार, देशभर में 121 प्रमुख भाषाएं और 19,500 से अधिक बोलियां प्रचलित हैं। भारतीय आदिवासी समुदायों में भी भाषाई विविधता व्यापक है। आदिवासी भाषाएं केवल अभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि पहचान, संस्कृति और पारंपरिक ज्ञान का मुख्य आधार हैं। इनके संरक्षण में मिथकों, किंवदंतियों, गीतों, वीरगाथाओं और लोककथाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान है।

प्राच्यकालीन ऐतिहासिक विश्लेषणों में यह पाया जाता कि आदिवासी भाषाओं का स्वरूप जीवंत और व्यापक रहा है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऑस्ट्रो- एशियाई, तिब्बतीबर्मी और द्रविड़ भाषा की जड़ें आदिवासी भाषाओं की ही उपज थीं। वैदिक काल में जहाँ संस्कृत प्रमुख धार्मिक और वैदिक साहित्य की भाषा रही, वहीं इसके समानांतर अनेक लोक भाषाएं एवं जनजातीय भाषाएं भी अस्तित्व में थीं। मौर्य काल तथा गुप्तकाल में संस्कृत व प्राकृत जैसी भाषाओं का प्रभुत्व था, किंतु आदिवासी क्षेत्र(आटविक प्रदेश) स्वायत्त होने के कारण इन क्षेत्रों की भाषाएं अपरिवर्तित स्वरूप में बनी रहीं।

मध्यकाल (लगभग 8वीं से 18वीं सदी) के दौरान आदिवासी भाषाएं मुख्यत: मौखिक थीं अतः इन भाषाओं की लिखित लिपियाँ सीमित प्राप्त होती हैं। भारत पर लगातार बाहरी लोगों (दिकुओं) के आक्रमणों से अपनी संस्कृति के बचाव के लिए आदिवासी लोगों द्वारा अपनी भाषा को एक "कोड" की भांति प्रयोग किया गया। परिणामस्वरूप फ़ारसी,उर्दू जैसी

* शोधार्थी, शिक्षा शास्त्र विभाग, उदय प्रताप कॉलेज, वाराणसी, संबद्ध: महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय, वाराणसी

भाषाओं के बढ़ते प्रभाव से अछूती रहीं जिससे आंतरिक रूप से इनकी भाषाओं का संरक्षण हुआ। गोंडवाना साम्राज्य में रानी दुर्गावती व अन्य गोंड राजाओं द्वारा गोंडी भाषा व अहोम साम्राज्य के राजाओं द्वारा लिपि (ताई-अहोम) को राजकीय सम्मान व संरक्षण दिया गया। पड़ोसी क्षेत्रीय भाषाओं के प्रभाव के कारण शब्दों के आदान-प्रदान होने से आदिवासी बोलियां (जैसे मुंडारी और हो) जीवंत बनीं। इस कालखंड में आदिवासी भाषाएं जल,जमीन,और जंगल से संबंधित ज्ञान को व्यापकता प्रदान कर समुदाय के सांस्कृतिक पहचान का हिस्सा बन कर उभरीं।

ब्रिटिश काल में भारतीय भाषाओं का पहला भाषाई सर्वेक्षण 1894 में जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन द्वारा शुरू किया गया, जिन्होंने 1901 की जनगणना के लिए भाषा सर्वेक्षण रिपोर्ट भी तैयार की थी। इसमें कुल 179 भाषाएं और 544 बोलियां सूचीबद्ध किए। ब्रिटिश शासन काल में प्रशासन व शिक्षा प्रदान करने के माध्यम के रूप में अंग्रेजी जैसी भाषा को बढ़ावा मिलने से आदिवासी भाषाओं में ह्रास देखा गया। हालांकि कुछ विद्वानों द्वारा इन भाषाओं का दस्तावेजीकरण शुरू किया गया जिसमें उन्होंने शब्दकोश व धार्मिक साहित्यों को लिखित स्वरूप दिया। भारत की जनगणना-1961 में 1,652 मातृभाषाएं दर्ज की गई। इनमें से लुप्तप्राय भाषाओं के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए योजना (एसपीपीईएल) ने 117 लुप्तप्राय भाषाओं की पहचान की है। जनगणना-2011 के अनुसार कुल तर्कसंगत मातृभाषाओं की संख्या 2,843 दर्ज की गई है।

विभिन्न आयोगों एवं नीतियों के परिप्रेक्ष्य में आदिवासी भाषा :

भारत में स्वतंत्रता के बाद आदिवासी भाषाओं के महत्व को स्वीकार करते हुए भाषा संबंधी नीति-निर्माण,क्रियान्वयन एवं संवर्धन का प्रयास शुरू किया गया। इसका मुख्य आधार यह था कि अलग-अलग आयोगों और समितियों की अनुशंसाओं के मद्देनजर आदिवासी भाषाओं के सुधार व विकास के बारे में अहम प्रयास किया जा सके।

मुदालियार आयोग (1952-53) ने माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्रणाली में द्विभाषा सूत्र (मातृभाषा व हिंदी) का सुझाव दिया। आयोग ने मातृभाषा को मुख्य जबकि अंग्रेजी व संस्कृत को गौण भाषा के रूप में पढ़ाने की अनुशंसा किया।

केंद्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् (1956) द्वारा त्रिभाषा मॉडल प्रस्तुत किया गया। जिसके अनुसार माध्यमिक स्तर के प्रत्येक छात्र को मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, अंग्रेजी या अन्य आधुनिक विदेशी भाषा तथा अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा का ज्ञान कराए जाने की सलाह दी।

कोठारी आयोग(1964-66) द्वारा भी त्रिभाषा सूत्र को स्वीकारा गया। उसके अनुसार कक्षा 1 से 10 तक छात्रों को तीन भाषा में शिक्षा देने की बात कही गई। साथ ही आयोग द्वारा यह सुझाव दिया गया कि शिक्षा के अलग-अलग स्तरों पर मातृभाषा आधारित शिक्षा को माध्यम बनाया जाये।

शिक्षा आयोग (1964) द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन में त्रिभाषा मॉडल को अनुशंसित किया गया। मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से शिक्षा देने व इन भाषाओं के विकास हेतु सिफारिश प्रस्तुत किए।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 में कहा गया है कि प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम स्थानीय आदिवासी भाषा हो तथा समावेशी शिक्षण द्वारा सीखने की मुख्य धारा से पीछे छूटे समुदायों को जोड़ा जाए। आदिवासियों की ज्ञान प्रणाली,संस्कृति, व कला को पाठयक्रम में जोड़ा जाय ताकि वे शिक्षा को जीवन के करीब से महसूस कर सकें। शिक्षकों की नियुक्ति करते समय यह विशेष ध्यान दें कि ऐसे शिक्षक नियुक्त हों जो आदिवासी संस्कृति एवं भाषा से परिचित हों ताकि छात्र-शिक्षक के मध्य बेहतर संवाद स्थापित कर सके। सीखने की प्रक्रिया और मूल्यांकन को लचीला बनाने पर जोर दिया गया है ताकि आदिवासी बच्चों को उनके स्तर तक पहुंच सुनिश्चित कर जरूरतों को पूरा किया जा सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020: वर्तमान समय में सर्वाधिक प्रासंगिक यह शिक्षा नीति प्रारंभिक शिक्षा को मातृभाषा/स्थानीय भाषा में प्रदान करने पर बल देती है। आदिवासी भाषाओं को पाठयक्रम में शामिल करने के साथ ही टीचिंग लर्निंग प्रोसेस से एकीकृत करने हेतु विशेष अनुशंसा करती है।

आदिवासी भाषाओं का संरक्षण एवं संवैधानिक प्रावधान:

अनुच्छेद 29- भारत के किसी भी हिस्से में रहने वाले नागरिकों को अपनी विशिष्ट भाषा,लिपि या संस्कृति के संरक्षण का मौलिक अधिकार प्रदान करता है। यह अनुच्छेद आदिवासी भाषाओं को संवैधानिक संरक्षण का आधार होने के

साथ ही उनके सांस्कृतिक पहचान के अस्तित्व की रक्षा सुनिश्चित करता है। डी. ए. वी. कॉलेज बनाम पंजाब राज्य (1971) तथा अन्य मामलों में भी में सुप्रीम कोर्ट ने यह स्थापित किया कि भाषाई अधिकार सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकारों का अभिन्न अंग है। अतः अनुच्छेद 29(1) के तहत, किसी भी आदिवासी भाषा, लिपि या संस्कृति को संरक्षित करने का अधिकार सांस्कृतिक अधिकारों का ही भाग है।

अनुच्छेद 30- धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्ग को अपनी पसंद के शिक्षण संस्थान स्थापित करने और उनका प्रशासन करने का अधिकार देता है। यह अनुच्छेद मातृभाषा आधारित शिक्षा को संभव बनाने के साथ ही आदिवासी भाषा संरक्षित करने को सहायता प्रदान करता है। सरकारों को बिना किसी भेदभाव ऐसे प्रबंधन के अधीन स्थापित शैक्षणिक संस्थानों को सहायता प्रदान करने की बात कही गई है। सेंट जेवियर्स कॉलेज बनाम गुजरात राज्य वाद (1974): सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्णय दिया कि अल्पसंख्यकों को अपने शिक्षण संस्थान चुनने, स्थापित करने और प्रशासित करने का व्यापक अधिकार है। इस निर्णय को आधार मानकर आदिवासी समुदाय अपनी भाषा में संस्थान का संचालन करने का अधिकार रखते हैं। पी.ए. इनामदार बनाम महाराष्ट्र राज्य (2005) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि राज्य सरकारें अल्पसंख्यक संस्थानों सहित गैर-सरकारी शिक्षण संस्थानों की प्रवेश संरचना को विनियमित करने की स्वायत्तता को सीमित नहीं कर सकती हैं। इस आधार पर आदिवासी संस्थानों को स्वायत्तता एवं भाषा आधारित शिक्षा को समर्थन मिलता है।

अनुच्छेद 347- यदि इस निमित्त मांग किए जाने पर राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाय तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए,जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

अनुच्छेद 350(A)- प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा। चूंकि आरंभिक शिक्षा के दौरान ही आदिवासी भाषा शिक्षण प्रक्रिया का भाग बन जाए तो यह बच्चों के सीखने की क्षमता में वृद्धि करने के साथ ही उनके भाषा संरक्षण का सबसे प्रभावी एवं उपयुक्त माध्यम जाएगा।

आठवीं अनुसूची - वर्तमान में इसके अंतर्गत भारत की आधिकारिक मान्यता प्राप्त 22 भाषाओं की सूची शामिल है। 92वें संविधान संशोधन-2003 के द्वारा संथाली एवं बोडो भाषा जोड़ा गया, जो कि आधिकारिक भाषा के रूप में शामिल है। संथाली भाषा मुख्यतः झारखंड,बिहार,पश्चिम बंगाल,और ओडिशा की प्रमुख भाषा है, जिसे ओल चिकी लिपि में लिखा जाता है। हालांकि हो,मुंडारी,उरांव/कुड़ुख,गोंडी, साओरा जैसी भाषाओं को भी आठवीं अनुसूची में शामिल करने की मांग चल रही है।

पांचवीं अनुसूची- यह अनुसूची भारत के दस राज्यों(आंध्रप्रदेश,छत्तीसगढ़,गुजरात,हिमाचल प्रदेश,झारखंड,मध्य प्रदेश,महाराष्ट्र,ओडिशा,राजस्थान और तेलंगाना) के अनुसूचित क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी समुदायों के प्रशासन,सुरक्षा एवं नियंत्रण से संबंधित संवैधानिक प्रावधान है। इसका उद्देश्य आदिवासी संस्कृतियों एवं परंपराओं का संरक्षण करना है। इस अनुसूची में प्रत्यक्षतः भाषा संरक्षण उल्लेखित नहीं है, किंतु भाषा संस्कृति का अभिन्न हिस्सा होती है इसलिए इसका संरक्षण इस संरचना में शामिल किया जाता है। अधिकांश आदिवासी समुदाय अनुसूचित क्षेत्रों में ही निवास करते जहां इनकी स्थानीय भाषाएं दैनिक जीवन का हिस्सा होती हैं अतः इन भाषाओं का प्राकृतिक संरक्षण यहां सहजता से किया जा सकता है।

पेसा [Pancahayat (Extension to Scheduled Areas) Act,1996 अधिनियम:

वर्ष 1995 में भूरिया समिति की सिफारिशों के बाद पांचवीं अनुसूची के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन को बढ़ावा देनें के लिए इस अधिनियम को लागू किया गया। यह अधिनियम ग्राम सभा की शक्तियों को विनियमित करता है जिससे कि उन्हें स्थानीय निर्णय लेने के अधिकार होने के साथ ही स्थानीय भाषा में संवाद को बढ़ावा मिलता है। यह प्राविधित करता है कि सांस्कृतिक अस्मिता के संरक्षण के साथ ही परंपराओं एवं भाषाओं की रक्षा हो। संसाधनों पर नियंत्रण स्थापित कर स्थानीय ज्ञान प्रणाली को बढ़ावा देने पर बल देता है।

अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में आदिवासी भाषा एवं संरक्षण के प्रयास :

यूनेस्को के द्वारा जारी एटलस के अनुसार सम्पूर्ण दुनिया में लगभग 8324 भाषाएं लिखी - बोली जाती हैं जिसमें से लगभग 7000 भाषाएं अभी भी प्रचलन में हैं, लेकिन लगभग 3000 से अधिक भाषाएं विलुप्ति के कगार पर हैं। जहां एक ओर लगभग दुनिया की 50 प्रतिशत आबादी केवल 23 भाषा जानती और उपयोग करती है, वहीं धरती के प्रथम नागरिक अर्थात् आदिवासी समुदायों के द्वारा लगभग 4000 भाषाएं बोली-लिखी-पढ़ी जाती हैं।

भारत में आदिवासी की अवधारणा अन्य देशों से अलग है क्योंकि अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में बाहरी लोगों के आकर बस जाने से वहां के मूल निवासी हाशिए पर चले गए। भारत में कोई बड़ी बाहरी आबादी ने मूल निवासियों को प्रतिस्थापित नहीं किया बल्कि सभी समूहों से आपसी सामंजस्य स्थापित कर अपनी जीवंतता को बनाए रखा। साथ ही यह जानना आवश्यक है कि भारत में भाषा के आधार पर आदिवासी (indigenous) तय नहीं किया जाता क्योंकि इन समुदायों की भाषा पारंपरिक ज्ञान एवं जैवविविधता से प्रत्यक्षतः जुड़ी है। जहां एक तरफ पारंपरिक ज्ञान जैसे- औषधीय ज्ञान,कृषि पद्धतियां व पर्यावरण संरक्षण आदिवासी भाषाओं में निहित हैं वहीं वनस्पतियों एवं जीवों के स्थानीय नाम व उपयोग प्राकृतिक रूप से आदिवासी भाषाओं में ही सुरक्षित हैं।

संयुक्त राष्ट्र (यूएन) ने आदिवासी भाषाओं को मानवाधिकार का हिस्सा माना है। यूएन डिक्लेरेशन ऑन द राइट्स ऑफ इंडिजिन्स पीपुल्स (2007) में कहा गया है कि आदिवासी समुदायों को अपनी भाषा सीखने, सीखाने एवं उपयोग करने का पूरा अधिकार है। वे इन अधिकारों का प्रयोग सांस्कृतिक अभिव्यक्ति,मातृभाषा में शिक्षा, मीडिया एवं प्रशासन में भाषा का उपयोग कर सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2019 को अन्तर्राष्ट्रीय आदिवासी भाषा वर्ष घोषित किया गया। इसका उद्देश्य उस असहज स्थिति की ओर आकर्षित करना था जिसमें कहा गया कि विश्व की 7000 भाषाओं में से लगभग 40 प्रतिशत भाषा विलुप्ति के कगार पर हैं।

यूनेस्को अर्थात् संयुक्त राष्ट्र संघ शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन द्वारा जारी वर्ष 2022 के महत्वपूर्ण प्रस्ताव के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 2022-2032 के दशक को आदिवासी भाषा दशक घोषित किया गया है। यूएनजीए (संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा) द्वारा पारित प्रस्ताव में स्पष्ट रूप से यह कहा गया कि- इस दशक का उद्देश्य महान आदिवासी भाषाई और सांस्कृतिक संपदा की धरोहर का संवर्धन,संरक्षण और प्रसार करना है। यूनेस्को के अनुसार जारी रिपोर्ट्स में यह दर्शाया गया है कि हर दो सप्ताह में एक भाषा समाप्त हो रही है, जिसमें से आदिवासी भाषाएं सर्वाधिक खतरे का सामना कर रही हैं। यूनेस्को ने भाषा एटलस जारी करते हुए यह सुझाव दिया है कि डिजिटल संरक्षण एवं शिक्षा में मातृभाषा का समर्थन प्राप्त कर इस खतरे को कम किया जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) कन्वेंशन 169 (1989) के तहत आदिवासी समुदायों के लिए भाषा एवं संस्कृति की रक्षा करने हेतु बल दिया गया है। सरकारों को यह भी मार्गदर्शित किया गया है कि मातृभाषा में शिक्षा को प्रोत्साहन मिले तथा भाषा के विकास को बढ़ावा दिया जाए, किंतु भारत द्वारा इस समझौते को अनुशंसित(ratify) नहीं किया गया है।

भारत सरकार द्वारा संचालित पहल एवं योजनाएं:

ट्राई (Tribal Research institutes): यह संस्थागत रूप से आदिवासी भाषाओं के संरक्षण के लिए अंब्रेला योजना के रूप में कार्य करती है। इसके द्वारा आदिवासी भाषाओं का दस्तावेजीकरण (documentation), लोक साहित्यों का संग्रह, शब्दकोश एवं पुस्तकों को संरक्षित किया जाता। समय समय पर प्रशिक्षण, सेमिनार एवं वर्कशॉप का भी आयोजन किया जाता है। उदाहरण: त्रिपुरा राज्य में kokborok आदि भाषाओं पर पुस्तकें संग्रहित कर शोध कार्य किए जा रहे हैं।

"Adi Vaani" (AI आधारित भाषा ऐप): यह आदिवासी भाषाओं के लिए एआई ट्रांसलेटर ऐप है। इसके माध्यम से टेक्स्ट-टू-स्पीच, डिजिटल कंटेंट निर्माण एवं सरकारी योजनाओं की जानकारी स्थानीय भाषा में दी जाती है। इसका मुख्य उद्देश्य भाषा को डिजिटल युग में जीवंत बनाना तथा शिक्षा एवं प्रशासन में उपयोग को बढ़ावा देना है।

लुप्तप्राय भाषाओं के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए योजना (एसपीपीईएल): संस्कृति मंत्रालय द्वारा वर्ष 2013 में इस योजना की शुरुआत विलुप्ति के कगार पर पहुंच चुकी भारतीय भाषाओं के संरक्षण एवं संवर्धन के उद्देश्य से किया गया। इस योजना की कार्यप्रणाली के अंतर्गत भाषाई सर्वेक्षण,रिकॉर्डिंग(ऑडियो/वीडियो),व्याकरण एवं शब्दकोश निर्माण शामिल है। उदाहरण स्वरूप देखा जाय तो गोंडी और कुड़ुख जैसी आदिवासी भाषाओं का सर्वेक्षण कर आंशिक दस्तावेजीकरण किया गया है। यह योजना आर्काइवल संरक्षण के साथ ही भाषाई शोध को बढ़ावा देने में मददगार साबित हो रही है।

भाषिणी प्लेटफॉर्म: एआई संचालित भाषा अनुवाद मंच है। यह राष्ट्रीय भाषा अनुवाद मिशन का हिस्सा है, जो यह सुनिश्चित कराता है कि भारतीय अपनी भाषा में इंटरनेट से जुड़ें तथा डिजिटल सेवाओं तक सुगम पहुंच सुनिश्चित कर पाएं। यह भीली,गोंडी,मुंडारी,कुई और गारो जैसी आदिवासी भाषाओं का रियल टाइम अनुवाद कर पाने में सक्षम है।

GOAL (Going Online as Leaders) पहल: मेटा (फेसबुक) एवं जनजातीय मंत्रालय, भारत सरकार की एक संयुक्त पहल है। इस पहल का प्रमुख उद्देश्य आदिवासी युवाओं एवं महिलाओं को डिजिटल साक्षरता प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाना है।

सांस्कृतिक महोत्सव एवं कार्यक्रम: सरकार द्वारा प्रति वर्ष 15 नवंबर को जनजातीय गौरव दिवस मनाया जा रहा है। समय-समय पर विविध जनजातीय उत्सवों का आयोजन भी किया जाता जिससे इनकी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के साथ ही लोकभाषाओं के प्रयोग को प्रोत्साहन मिले।

आदिवासी भाषाओं का संरक्षण: वास्तविक स्थिति, चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

भारत में सैकड़ों से ज्यादा आदिवासी भाषाएं प्रचलित हैं किन्तु अधिकांशतः विलुप्ति की कगार पर हैं तो कई सारी संकटग्रस्त स्थित में हैं। इन क्षेत्रों में एकलव्य मॉडल रेजिडेंशियल स्कूल्स होनें के बावजूद भी अधिकांश स्कूलों में हिन्दी या अंग्रेजी माध्यम में शिक्षण प्रणाली संचालित हो रही है। मातृभाषा आधारित शिक्षा के अभाव में इन क्षेत्रों के बच्चे अपनी मूल भाषा से दूर हो रहे हैं। शासन प्रणाली में हिन्दी एवं अंग्रेजी जैसी भाषा के प्रमुखता से उपयोग किए जाने एवं न्यायालयी कार्यों में अंग्रेजी भाषा के बढ़ते प्रयोग ने आदिवासी भाषाओं के प्रयोग को नगण्य सा बना दिया है। युवा पीढ़ियों में मुख्यधारा की भाषा उपयोग को प्राथमिकता देने से आदिवासी भाषा का उपयोग घट रहा है। इंटरनेट इत्यादि पर आदिवासी भाषाओं एवं डिजिटल कंटेंट की कम उपलब्धता इसके ह्रास के प्रमुख कारणों में से एक है।

वैश्वीकरण एवं बढ़ती आधुनिकता ने कुछ प्रमुख भाषाओं जैसे- अंग्रेजी व हिंदी के वर्चस्व को बढ़ा दिया है, जिससे आदिवासी भाषाएं हाशिए पर पहुँच चुकी हैं। आदिवासी भाषाओं के जानकार शिक्षकों एवं संबंधित शिक्षण सामग्री के कमी होने के कारण मातृभाषा में शिक्षा प्रदान करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। आदिवासी भाषा संबंधी स्पष्ट नीति का अभाव तो है किन्तु मौजूदा कानूनों को भी क्रियान्वयकारी (implementer) निकाय/संस्था द्वारा कठोरता से लागू न कराए जाने से सकारात्मक परिणाम नहीं प्राप्त हो रहे हैं। विशेषज्ञों द्वारा एक महत्वपूर्ण तर्क प्रस्तुत किए जा रहे हैं कि आदिवासी भाषाएं रोजगारपरक न होने की वजह से अपने मूल अस्तित्व में आ पाने में असक्षम हैं। सामाजिक दबाव में या आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जब आदिवासी पलायित कर जाएगा तो स्वाभाविक है कि वह प्रमुख भाषा को सीखने में तत्पर होगा, ऐसे में वह अपनी मूल भाषा से दूर होता चला जाएगा। आदिवासी क्षेत्रों में इंटरनेट की अपर्याप्त उपलब्धता एवं डिजिटल साक्षरता के अभाव के कारण भी ये अपनी भाषा को सीखने में कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं।

आदिवासी समुदाय की सहभागिता आधारित प्रयास जैसे कि सांस्कृतिक महोत्सवों के आयोजन तथा लोकसाहित्यों के संरक्षण द्वारा सकारात्मक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। बहुभाषी शिक्षा एवं मातृभाषा आधारित शिक्षा द्वारा इन भाषाओं का संरक्षण किया जा सकता है जिसमें कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। संबंधित सरकारी योजनाओं के बेहतर क्रियान्वयन, भाषाओं के डॉक्यूमेंटेशन एवं शोध के माध्यम से इन भाषाओं को पुनर्जीवित किया जा सकता है। वैश्विक संस्थाओं (जैसे कि संयुक्त राष्ट्र, यूनेस्को इत्यादि) के कार्यक्रमों व अंतर्राष्ट्रीय अनुदानों के बेहतर प्रबंधन व क्रियान्वयन द्वारा आदिवासी भाषाओं के समक्ष उपजी समस्याओं से निपटा जा सकता है।

संदर्भ सूची

1. चटर्जी, एस. के. (1970). Indo-Aryan and Hindi. के. एल. मुखोपाध्याय।
2. ग्रियर्सन, जी. ए. (1903–1928). Linguistic Survey of India (खंड 1–11). भारत सरकार।
3. भारत सरकार। (2011). जनगणना रिपोर्ट 2011: भाषा डेटा। नई दिल्ली: भारत के महापंजीयक एवं जनगणना आयुक्त का कार्यालय। https://censusindia.gov.in/
4. यूनेस्को. (2010). Atlas of the World's Languages in Danger (प्रथम संस्करण)। यूनेस्को पब्लिशिंग। https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000187026
5. सिंह, म. (2015). आदिवासी भाषाओं के संरक्षण की चुनौतियाँ. भाषा विमर्श, 12(2), 34-41.
6. शर्मा, र. (2020). भारतीय भाषाओं का विकास. नई दिल्ली, भारत: साहित्य भवन।
7. भारत सरकार। (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020। नई दिल्ली: मानव संसाधन विकास मंत्रालय। https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/nep_update/NEP_final_HI_0.pdf
8. भारत सरकार। (2019). डिजिटल इंडिया कार्यक्रम। इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय। https://www.digitalindia.gov.in/
9. भारत सरकार। (2022). प्रधानमंत्री जनजातीय विकास मिशन। जनजातीय कार्य मंत्रालय। https://tribal.nic.in/ (अभिगमन तिथि: 3 अप्रैल 2026)
10. भारत सरकार। (1950). भारत का संविधान। नई दिल्ली: भारत सरकार प्रकाशन विभाग। https://www.legislative.gov.in/documents/constitution-of-india/constitution-of-india-AjN2EjMtQWa?pageTitle=Constitution-of-India
11. भारत सरकार। (1963). राजभाषा अधिनियम, 1963। नई दिल्ली: गृह मंत्रालय। https://rajbhasha.gov.in/hi/official_languages_act_1963
12. संयुक्त राष्ट्र। (1948). मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा। https://www.ohchr.org/en/universal-declaration-of-human-rights
13. यूनेस्को। (2003). भाषा जीवन्तता और संकटग्रस्तता। http:// unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000187026

रीतिकालीन कवि बिहारी की बहुमुखी प्रतिभा और ज्ञान वैभव का विश्लेषणात्मक अध्ययन

विष्णु*

सारांश –

हिंदी साहित्य अनेक प्रतिभाशाली रचनाकारों की थाती से समृद्ध है। इन बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकारों ने अपनी गहरी समझ और असाधारण कौशल से हिंदी को विश्वस्तरीय साहित्य की श्रेणी में ला खड़ा किया है। इन प्रख्यात कवियों में पंडित और विद्वान कवि बिहारी का नाम निर्विवाद रूप से शीर्ष पर आता है। यद्यपि कई कवि अपनी प्रतिभा के बल पर महानता की श्रेणी में गिने जाते हैं, परंतु बहुआयामी व्यक्तित्व के मामले में बिहारी लाल सर्वोपरि सिद्ध होते हैं। बिहारी को साहित्य के विभिन्न रूपों का व्यापक ज्ञान था। उन्होंने लोक-जीवन का बहुत सूक्ष्म और गहरा अध्ययन किया था। उनकी रचना 'सतसई' न केवल साहित्यिक सौंदर्य का प्रमाण है, बल्कि अन्य अनुशासनों पर उनकी पकड़ को भी दर्शाती है। राजदरबारों के संरक्षण में रहने के कारण उन्हें दरबारी संस्कृति और राजनीति की गहरी समझ थी। उनकी कविता में ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, धर्म, दर्शन और नीति शास्त्र का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। निःसंदेह, बिहारी बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि थे। जिसे हम इस शोध आलेख में बिहारी के काव्य का गुणात्मक प्रविधि के माध्यम से विश्लेषण करेंगे।

बीज बिन्दु - रीतिकाल, रीतिसिद्ध, कवि बिहारी, सतसई, मुक्त काव्य, भारतीय काव्यशास्त्र, लोकसंबंधी ज्ञान, बहुज्ञता।

बिहारी रीतिकाल की 'रीतिसिद्ध' काव्यधारा के सबसे महत्वपूर्ण कवि है। रीतिसिध्द काव्यधारा, वह धारा है जिसमें काव्यशास्त्र और नायिका भेद इत्यादि से संबंधित लक्षण ग्रन्थों की रचना तो नहीं की गई है किंतु कविताओं की रचना में काव्यशास्त्र के सभी तत्व जैसे- रस,अलंकार, ध्वनि, रीति तथा वक्रोक्ति आदि का पूरा ध्यान रखा गया। रीतिसिद्ध कविता रीतिबद्ध काव्य से सिर्फ एक मायने में अलग है कि जहाँ रीतिबद्ध कवि लक्षण ग्रंथों की रचना करते है अर्थात् पहले किसी सिद्धांत की परिभाषा देकर उसे अपनी कविता के उदाहरण से स्पष्ट करते हैं, वही रीतिसिद्ध कवि सिद्धांतों की परिभाषाओं या लक्षण के फेर में नहीं पड़ते। वे सिर्फ कविताएँ लिखते हैं, हालांकि उनकी हर कविता काव्यशास्त्र, नायिका-भेद, कामशास्त्र के किसी न किसी सिद्धांत को आधार मानकर लिखी गई होती है। यह काव्य भी रीतिबध्द काव्य की तरह दरबारों में ही रचा गया है और इसमें भी राजाओं की प्रशंसा, शृंगार तथा सांमती विलास की प्रवृतियाँ देखने को मिलती है। बिहारी के सतसई में शृंगार रस की प्रमुखता होते हुए भी उनके काव्य में विविध विषयों का निरूपण देखने को मिलता है जैसे- भक्ति, नीति, ज्योतिष और अर्थशास्त्र आदि। इनकी प्रसिद्धि का आधार एक ही कृति बिहारी सतसई है। गणपतिचंद्र गुप्त अपने हिन्दी साहित्य के वैज्ञानिक इतिहास में लिखता है। "बिहारी ने केवल एक ही ग्रन्थ बिहारी सतसई' की रचना अनुमानतः 1700 वि०संवत् में की, किन्तु यह इतनी लोकप्रिय हुई कि इनका स्थान इस काल के श्रेष्ठ कवियों में माना जाता है।"[1] सतसई के कारण ही बिहारी की प्रसिद्धि ख्याति हुई। जिसे साहित्य कोश-2 से स्पष्ट है। "इनकी एक ही रचना 'सतसैया' मिलती है, जिसमें इनके बनाये 713 मुक्तक दोहे तथा सोरठे संगृहीत हैं।"[2] इन पर बहुत सी टिकाएं रची जा चुकी है जिससे लगता है कि "बिहारी संबंधी एक अलग ही साहित्य खड़ा हो गया है।"[3] परंतु आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जगन्नाथदास 'रत्नाकर' द्वारा रचित "बिहारी रत्नाकर" को ही सर्वमान्य रूप से प्रामाणिक माना, जिसे वह लिखते है। "बिहारी का सबसे उत्तम और प्रामाणिक संस्करण बड़ी मार्मिक टीका के साथ थोड़े दिन हुए प्रसिद्ध साहित्यमर्मज्ञ और ब्रजभाषा के प्रधान आधुनिक कवि बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने निकाला। जितने श्रम और जितनी सावधानी से यह संपादित हुआ है, आज तक हिंदी का और कोई ग्रंथ नहीं हुआ।"[4]

बिहारी सतसई का निर्माण गाथा सप्तशती, आर्या सप्तशती और संस्कृत के अमरुशतक आदि ग्रंथों की प्रेरणा से हुई। "बिहारी के बहुत से दोहे 'आर्यासप्तशती' और 'गाथासप्तसती' की छाया लेकर बने हैं।"[5] मुक्तक काव्य परंपरा में बिहारी का स्थान शीर्ष पर हैं, उनके काव्य के समान कोई मुक्तक काव्य नहीं है। जिसे आचार्य राम चंद्र शुक्ल कहते है "श्रृंगाररस के ग्रंथों में जितनी ख्याति और जितना मान 'बिहारी सतसई' का हुआ उतना और किसी का नहीं। इसका एक-एक दोहा हिंदी साहित्य में एक-एक रत्न माना जाता है।"[6] वह केवल दोहे व सोरठे छंदों में रचना करते थे उनके दोहे दिखने में छोटे अर्थात् पढ़ने में छोटे छन्द थे। "इनके दोहे क्या हैं रस के छोटे-छोटे छीटें हैं।"[7] परन्तु उन्होंने उसमें अद्भुत अर्थ विस्तार भर दिया है, जिनकी धार बहुत प्रखर है -

* शोधार्थी, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मानविकी विद्यापीठ, हिन्दी विभाग, नई दिल्ली– 110068
vkashyap8285@gmail.com & 9711485398

"सतसइया के दोहे, ज्यो नाविक के तीर।
देखन में छोटे लगे, धाव करे गंभीर ।।"[8]

इसी एकमात्र ग्रन्थ ने बिहारी की ख्याति इतनी बढ़ा दी कि सतसई शब्द का अर्थ ही 'बिहारी सतसई हो गया । इनकी कविताओं में चमत्कार की इतनी क्षमता है कि जार्ज ग्रियर्सन के इस कथन से बोध होता है, "अंग्रेज इन्हे भारत का टॉमसन (THOMPSON) कहते है।"[9] हिन्दी साहित्य में बहुमुखी प्रतिभा से अभिप्राय है कि कवि द्वारा व्यापक दृष्टि रखना अर्थात कई विषयों का ज्ञान । इस आधार पर कहा जा सकता है कि एक कवि में बहुज्ञता का गुण होना चाहिए, जिस कवि में बहुज्ञता जितनी अधिक होगी उसकी कृति उतनी ही सारगर्भित, आकर्षक व प्रौढ़ होकर साहित्यिक रूप से आकर्षित करती है। विद्वान कवियों की विद्वता उनकी कविताओं में विषद् एवं पूर्ण अर्थवत्ता के साथ उभरकर सामने आती है, बहुज्ञान और पांडित्य-प्रदर्शन रीतिकालीन कवियों की सामान्य प्रवृति रही है । बिहारी के काव्य में भी उनकी बहु प्रतिभा की झलक दिखती है जिसे धीरेन्द्र वर्मा ने हिन्दी साहित्य कोश में कहा है - "काव्य के लिए अनेक्षित सभी विषयों का सामान्य परिचय इन्हें था। पर इन्हें उन सभी विषयों का विशेषज्ञ नहीं कह सकते। इनकी रचना में ज्योतिष की कुछ बातें ऐसी अवश्य हैं, जो असाधारण हैं। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक बातें भी अप्रस्तुत रूप में आयी हैं। इनसे इनके लोकज्ञान का परिचय भर मिलता है। अप्रस्तुत रूप में बहुत सामान्य बातें लेकर इन्होंने अपनी काव्य-मर्मज्ञता भी दिखाई है। लोकज्ञान और शास्त्रज्ञान के साथ ही साथ इन्हें काव्यज्ञान भी अच्छा था। रीति का इन्हें परिपक्व ज्ञान था। इन्होंने अधिक वर्ण्य सामग्री श्रृंगार के क्षेत्र से ली है। प्रेम के संयोग पक्ष में इन्होंने नखशिख का वर्णन अधिक किया है, पर ऋतुओं का नाम मात्र का ।"[10] अतः बिहारी के काव्य में भी लोक एवं लोकजीवन के साथ-साथ विविध शास्त्रों का समान्य ज्ञान का बोध होता है । वे एक निपुण कवि थे जो समय और स्थिति के अनुसार भाव और कल्पना में सामंजस्य कर लेते थे। यथापि हमें इस तथ्य को स्वीकार करना होगा कि बिहारी राजाश्रयी कवि थे तथा रीतिकाल के आश्रित कवियों में जनसामान्य के प्रति उदासीनता एक आम प्रवृति थी इसलिए उनके काव्य में लोक सम्बन्धी अनुभव व्यापक नहीं कहा जा सकता। लेकिन अपनी संवेदनशीलता एव लोकसंपृक्ति के कारण तत्कालिक परिवेश का कोई विषय, उनकी दृष्टि से अछूता नहीं रहा। उन्हे वैभव और विलासिता का परिवेश मिलने के बावजूद उनकी रचनाओं में तत्कालीन सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है। उनको बहुशास्त्रों का ज्ञान था, जिनमें भक्ति विचार, नीति विज्ञान, राजनीति, ज्योतिष, चिकित्सा, वैद्य, गणित, अर्थशास्त्र, प्रकृति ज्ञान तथा मनोविज्ञान आदि अनेक विषयों की जानकारी के संकेत उनके काव्य में मिलते है। अतः बिहारी को शृंगारिक कवि के साथ-साथ बहुज्ञता कवि भी कहा जाता है। बिहारी के सतसई में शृंगारेतर भाव व्यंजना भी दिखती है जिस पर बच्चन सिंह लिखते है- "श्रृंगार के अतिरिक्त बिहारी में अन्य प्रकार की भाव अभिव्याक्तियाँ भी मिलती है। इनके तीन रूप है- व्यग्योक्तियाँ, भक्तिपरक रचनाएँ और प्रकृति वर्णन।"[11] बिहारी की इन्हीं लोक, शास्त्र तथा भाव व्यंजना संबंधी बहुलता को इनके दोहों के माध्यम से समझेंगे ।

लोक सम्बन्धी ज्ञान में सामाजिक जीवन की परिस्थिति अनुरूप बिहारी ने भक्ति, नीति एवं उपदेशपरक दोहे रचकर समाज का मार्गदर्शन किया। उल्लेखनीय है कि बिहारी ने इन लोक संबंधी दोहों मे ज्ञान तो प्रदर्शित किया ही है, किन्तु इनके साथ-साथ दोहों में नायक-नायिका के शृंगारपरक भावों को भी देखा जा सकता है।

जादू-टोने का ज्ञान - बिहारी के समय में जनसामान्य का जादू-टोने पर अन्धविश्वास था। जादू-टोना लोक समस्याओं को दूर करने का महत्वपूर्ण साधन समझ जाता था। इसी विषय पर बिहारी एक दोहा लिखते है-

"टुनहाई सब टोल में रही जु सौति कहाइ।
सु तैं ऐं चि प्यौ आपु-त्यौं करी अदोखिल आइ ।।"[12]

अर्थात यहाँ नायक को नायिका की सौतन ने वश में कर लिया है परन्तु जैसे ही वहाँ नायिका का प्रवेश होता है तो नायिका के सौन्दर्य से टोना करने वाली सौतन का दोष समाप्त हो जाता है। तथा टोना-टोटका करने वाली स्त्रियों को समाज में अच्छा समझा नही जाता।

खेल और उत्सवों का ज्ञान- जादू-टोने के अतिरिक्त बिहारी की रचनाओं में लोकप्रिय खेल और उत्सवों का भी उल्लेख मिलता है लोक-क्रीडाओं के अलावा बिहारी ने स्त्रियों और पुरुषों के मद्यपान का भी चित्रण किया है-

"उड़ति गुड़ी उड़ी लखि लाल की अँगना अँगना माँह ।
बौरी लौं दौरी फिरति छुअति छबीली छाँह ।।"[13]

"*ऊँचे चितै सराहियतु गिरह कबूतरु लेतु ।*
झलकति दृग मुलकती बदनु, तनु पुलकित किहि हेतु ।"[14]

बिहारी ने कबूतर उड़ाने के बहाने नायक-नायिका की गतिविधियों को प्रस्तुत किया है। जिसमें चतुर नायिका कबूतर की प्रशंसा कर अपने नायक के प्रति प्रेम को अपनी सखी से छिपाने का प्रयास कर रही है।

घर जवाई होने का दुष्परिणाम - बिहारी भी इस प्रथा को सामाजिक और पारिवारिक दृष्टि से सर्वथा अनुचित मानते थे।

"आवतः जात न जानियतु, तेजाहि तजि सियरानु ।
घर जँवाई लौ घट्यौ खरौ पूस-दिन-मानु ॥"[15]

वह कहते हैं कि घर जमाई(दामाद) की स्थिति पुस महीने की तरह दिनमान कम होती जाती है, उसी तरह जमाई का मान भी ससुराल में रहने से धीरे-धीरे कम होने लगता है।

धार्मिक रीतियों पर कटाक्ष-इसमें बिहारी ने समाज में व्याप्त रीतियों की विडम्बना को दर्शाया है जिसमेण वह धार्मिक आडंबरों को दर्शाते है-

"मरतु प्यासा पिंजरा परो सुआ समै के फेर ।
आदर दे दे बोलियत बाइसु बाल के बेर।"[16]

अर्थात घर में पिंजरे में कैद पालतू तोता भूख प्यास के मारे भरा जा रहा है एक और लोग धार्मिक रीतियों के अनुरूप कौओ को मनुहार करके बुला रहे है।

प्रकृति वर्णन - प्रकृति वर्णन में कविवर बिहारी का खून मन रमा है इसलिए उनके दोहों में हमें विविध दृश्यों का बिम्ब उभर कर आता है।

वसंत ऋतु का वर्णन -

"फिरि घर कौं नूतन पथिक चले चकित-चित भागि।
फूल्यौ देखि पलासु वन, समुही समुझि दवागि ।"[17]

इसमे पथिक को प्रथम बार वसंत प्रऋतु में पलाश का फूल दावाग्नि से जलते हुए प्रतीत होता है। उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि बिहारी ने अपने समकालीन जीवन के हर पक्ष का चित्रण किया है। परन्तु उनकी मुख्य शृंगार की प्रवृति हमें विविध विषयों में अपनी अनूठी छाप प्रकट करती है। विविध शास्त्र संबंधी ज्ञान बिहारी के दोहों में सामाजिक जीवन-मूल्यों के अतिरिक्त उनके विविध शास्त्री संबंधी ज्ञान को भी देखा जा सकता है। इनकी रचनाओं के अवलोकन से उनके ज्योतिष, गणित, राजनीति, नीति, आयुर्वेद, संगीत आदि विषयों का ज्ञान भी हमें देखने को मिलता है।

ज्योतिशास्त्र का ज्ञान- बिहारी सतसई में ज्योतिषशास्त्र से सम्बन्धित अनेक दोहे मिलते हैं। बिहारी ने ज्योतिष शास्त्र का संस्कृत अध्ययन के दौरान ही ग्रहण किया था ये सिध्दांत इतने साधारण नहीं जो संर्वसाधारण में प्रचलित रहे हो। ज्योतिष के अनुसार यह सिद्धांत है कि यदि मंगल, चन्द्रमा और वृहस्पति एक ही नाड़ी के चारों नक्षत्रों में से किसी एक पर पड़े तो इतनी वर्षा होती है कि संसार जलमय हो जाएगा।

"मंगल बिंदु सुरंगु, मुखु ससि केसरि आड़ गुरु।
इक नारी लहि संगु, रसमय किय लोचन-जगत॥"[18]

अर्थात, नायिका के मस्तक पर लगी हुई लाल बिन्दी मंगल है मुख चन्द्रमा और कैसर का पीला तिलक वृहस्पति है तथा इन सब को एक हो नारी ने धारण कर रखा है जिससे सम्पूर्ण जगत के नेता रसमय हो गये है।

दूसरा सिद्धांत - यदि शनिचर, तुला, धनु या मीन मे हो, अथवा लग्न में पड़ा हो तो जातक (बच्चा) स्वंय राजा होता है या फिर राजवंश करने वाला होता है। बिहारी ने अपने दोहे के माध्यम से इसी को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है-

"सनि कज्जल चख, सक लगन, उपज्यो सुदिन सनेह।
क्यौं न नृपति हवै भोगवै लहि सुदेस सब देहु।"[19]

उपर्युक्त दोहो के आधार पर कहा जा सकता है कि बिहारी को ज्योतिष का अच्छा ज्ञान था किन्तु इस ज्ञान के कारण बिहारी के दोहों में रसमयता बाधित सी लगती है क्योंकि साधारण पाठक को अर्थ ग्रहण करने में कठिनाई होती है।

आयुर्वेद का ज्ञान- बिहारी ने आयुर्वेद के चलते हुए सिध्दातों का वर्णन किया है। निम्नलिखित दोहे में विषम ज्वर के सुदर्शन चूर्ण द्वारा दूर होने की बात कही गई है-

"यह बिनसतु नगु राखि कै जगत बड़ौ जसु लेहु।
जरी विषम जुर जाइयैं, आइ सुदरसनु देहु।"[20]

आयुर्वेद में नपुसंकता नष्ट करने के लिए पारे का उपचार बताया गया है। इसी संकेत को लक्ष्य कर बिहारी कहते हैं कि वैद्य ने नपुंसकता के नाम पर धन ऐंठ लिया और बाद में अहसान के तौर पर मरीज को पारा दे दिया।

"बहु धनु लै अहसानु कै, पारो देत सराहि।
बैद-बधू हँसि भेद सौं, रही नाह-मुँह चाहि।।"[21]

निम्नलिखित दोहे में नाड़ी-ज्ञान, निदान इत्यादि की छाया पायी जाती है-

"मैं लखि नारी-ज्ञानु करि राख्यौ निरधारू यह।
बहुई रोग निदान, वह वैदु, औषधि वहै।"[22]

दर्शन का ज्ञान- बिहारी के दोहों में कहीं-कही दार्शनिक विषयों की भी छाया पायी जाती है जैसे भगवान की व्यापकता मे-

"मैं समुझौ निरधार, यह जगु काँचो काँच सौ।
एकै रूप अपार प्रतिबिम्बित लखियतु जहाँ।।"[23]
"जोग जुगति सिखए सबै मनौ महामुनि मैन।
चाहत पिय अद्वैतता काननु सेवत नैन।।"[24]

गणित शास्त्र का ज्ञान - हिन्दी साहित्य के अंतर्गत बिहारी सतसई की जिन आलोचकों ने आलोचना की है, उन्होंने बिहारी को श्रेष्ठ गणितज्ञ बतलाया है। परन्तु सतसई में इससे संबंधित केवल दो ही दोहे मिलते हैं-

"कुटिल अलक छुटि परत मुखि बढिगौ इतौ उदोतु।
बंक बकारी देत ज्यौ दाम रुपैया होतु।।"[25]

बिहारी कहते हैं कि यदि किसी अंक के आगे टेढ़ी उलकारी लगा दी जाती है तो उसका अर्थ रूपए का संकेत देने लगता है।

ऐतिहासिक एवं पौराणिक ज्ञान- बिहारी ने ऐसे दोहों की रचना भी की है जिनमे ऐतिहासिक महाभारत एवं रामायण काल के उपमानों का वर्णन प्रसुत किया है। जिसमे दुर्योधन का जलस्तम्भ गोवर्धन धरन, सीता की अग्नि परीक्षा आदि प्रसंग उपलब्ध होते है-

"रह्यौ ऐंचि अंतु न लहै, अवधि-दुसासनु वीरु।
आली, बाढ़त बिरह ज्यौ पंचाली कौ चीरु।।"[26]

एक अन्य दोहा देखिए जिसमें शिव-कृष्ण के युद्ध का संकेतित वर्णन किया है जो कवि बिहारी के पौराणिक ज्ञान को दर्शाता है।

"मोर मुकुट की चन्द्रकनु, यौं राजत नंदनन्द।
मनु ससिसेखर की अकस किय सेखर सत चन्द।।"[27]

नीतिशास्त्र का ज्ञान- बिहारी के नीतिपरक दोहों को देखकर उन्हें उच्च कोटि का नीतिकार नहीं कहा जा सकता, परन्तु इससे उन्हें नीति का ज्ञाता अवश्य कहा जा सकता है-

"कनकु -कनक तैं सौगुनौ मादकता अधिकाइ ।
उहिं खाऐं बौराइ इहिं पाऐं हिं बोराए।।"[28]

राजधर्म- राजधर्म प्रकरण में राज्य के सात अंग माने जाते है- स्वामी, अमात्य, सुहृत, कोप, राष्ट्र, दुर्ग और बल। बिहारी ने एक दोहे में शरीर के अंगों की तुलना राज्य के अंगों से की है-

"अपने अँग के जानि कै जोवन-नृपति प्रवीन।
स्वन, मन, नैन, नितम्ब की बडौं इजाफा कीन।।"[29]

(ज) कामशास्त्र का ज्ञान- कामशास्त्र का ज्ञान शास्त्रीय ज्ञान में ही आता है। बिहारी का दन्त-क्षत, नख-क्षत, विपरीत रति इत्यादि का वर्णन कामशास्त्रीय ज्ञान के अन्दर समन्वित हो जाता है इस दोहे में काम सम्बन्धी अनेक आसनों की छाया लक्षित होती है-

"पलनु पीक, अंजनु अधर धरै महावरु भाल।
आज मिले सु भली करी: भले बने हो लाल।।"[30]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बिहारी को लोक जीवन में प्रचलित विषयों का ज्ञान था। उनकी पर्यवेक्षण दृष्टि अधिक पैनी व सूक्ष्म थी फलस्वरूप बिहारी ने जिस चीज को देखा, उसकी जड़ तक पहुँचने की कोशिश की है। इस आधार पर कहा जा सकता है बिहारी बहुप्रतिभा के धनी कवि थे तथा उन्हें बहुत से शास्त्रों का ज्ञान था।

निष्कर्ष -

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि बिहारी रीतिकाल के दरबारी कवि होने के बावजूद उनमें राजाश्रय प्राप्त कवियों से भिन्न प्रकृति के थे। उन्होंने सामान्य लोक जीवन के विविध उपक्रमों, गतिविधियों, परम्पराओं आदि विषयों तक अपनी दृष्टि का विस्तार किया। यद्यपिं उनके काव्य में एक विशिष्ट वर्ग अथार्त् शृंगार का ही अधिक वर्णन हुआ है उन्होंने लोकजीवन से सम्बन्धित कई

बाते सतसई में समाहित की है। इसके साथ ही बिहारी ने रीतिकालीन प्रवृति के अनुरूप शृंगारिक दृष्टि रखते हुए भी अनेक शास्त्र एव विद्याओ तथा लोकतत्व के ज्ञान का परिचय अपने दोहों के माध्यम से प्रकट किया है। उनके दोहो में गणित शास्त्र, नीतिशास्त्र, आयुर्वेद, इतिहास, जादू-टोना आदि से सम्बन्धित गूढ़ तथ्यों एवं लोकजीवन के विविध उपादानों के समावेश से उनके इन विषयो के ज्ञान को सहज ही अनुभव किया जा सकता है। उन्होंने अपने इस ज्ञान का चिंतन अपनी सतसई में स्थान-स्थान पर प्रदर्शित किया है। जो उनकी बहुप्रतिभा व ज्ञान वैभव की विलक्षण प्रवृति का बोध कराता है।

संदर्भ सूची

1. गणपतिचंद्र गुप्त, हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2015 पृ.455
2. धीरेन्द्र वर्मा(संपादक), हिन्दी साहित्य कोश भाग-2, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, 1986 पृ. 375
3. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2025 पृ.168
4. वही, पृ.168
5. वही, पृ.170
6. वही, पृ.168
7. वही, पृ.169
8. वही, पृ.161
9. किशोरीलाल गुप्त(अनु.), हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास, ज्योति प्रकाश प्रेस, वाराणसी, पृ.186
10. धीरेन्द्र वर्मा(संपादक), हिन्दी साहित्य कोश भाग-2, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, 1986 पृ.375
11. बच्चन सिंह,बिहारी का नया मूल्यांकन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1964, पृ.67
12. जगन्नाथदास रत्नाकर, बिहारी रत्नाकर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2013 पृ.161
13. वही, पृ.177
14. वही, पृ.177
15. वही, पृ.96
16. बिहारी, बिहारी सतसई, कविता कोश, https://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%AC%E0%A4%BF%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%80_%E0%A4%B8%E0%A4%A4%E0%A4%B8%E0%A4%88_/_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%97_67_/_%E0%A4%AC%E0%A4%BF%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%80, देखा गया 20/01/2026
17. जगन्नाथदास रत्नाकर, बिहारी रत्नाकर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2013 पृ.271
18. वही, पृ.44
19. वही, पृ.25
20. वही, पृ.169
21. बिहारी, बिहारी सतसई, कविता कोश, https://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%AC%E0%A4%BF%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%80_%E0%A4%B8%E0%A4%A4%E0%A4%B8%E0%A4%88_/_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%97_62_/_%E0%A4%AC%E0%A4%BF%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%80, देखा गया 20/01/2026
22. जगन्नाथदास रत्नाकर, बिहारी रत्नाकर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2013 पृ.253
23. वही, पृ.100
24. वही, पृ.30
25. वही, पृ.205
26. वही, पृ.187
27. वही, पृ.194
28. वही, पृ.104
29. वही, पृ.24
30. वही, पृ.35